बैंकिंग चिंतन-अनुचिंतन

विषयसूची

पृष्ठ सं.

संपादकीय 2

अनुचिंतन 4

साक्षात्कार 6

लेख

- विदेशी मुद्रा नियंत्रण व विनियंत्रण — डॉ. दलसिंगार यादव — 11
- बैंकों में सूचना प्रौद्योगिकी एवं लाभप्रदता — विद्याभूषण मल्होत्रा — 16
- धोखाधड़ियां - निवारण ही उपाय है — अपूर्व कुमार — 19
- गैर निष्पादक ऋण - वर्तमान परिपेक्ष — रविनाथ टंडन — 22
- कृषि क्षेत्र के विकास में संस्थागत एजेंसियों का योगदान — डॉ. राजीवकुमार सिन्हा — 27

बैंकिंग परिदृश्य 30

कंप्यूटर परिभाषा कोश 32

पुरस्कृत निबंध

- स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति समस्या या समाधान — हेमंत शिवराम फाटक — 36

महत्वपूर्ण परिपत्र 41

पुस्तक समीक्षा 55

लेखकों से/ पाठकों से 60

संपादकीय

प्रिय पाठको,

फरवरी में बजट का प्रस्तुतीकरण पूरे देश में चर्चा का विषय होता है । मैं समझता हूं कि संपादकीय के माध्यम से इस धारणा के कारणों का पता लगाया जाए कि चर्चा क्यों होती है । जानकारी न रखनेवाले व्यक्ति के लिए बजट सरकार की आय और व्यय के आंकड़ों का एक सेट मात्र है । परन्तु जानकार लोगों के लिये ये आंकड़ें सरकार से मिलने वाले संकेतों को दर्शाते हैं । किसी बजट विशेष की व्याख्या और उससे मिलने वाले संकेत विशेषज्ञों के बीच भी अलग-अलग होते हैं और यही होता है चर्चा का कारण - कि बजट विकासपरक है या नहीं । इसके अलावा, यह भी एक सामान्य सी बात है कि चर्चा यूं भी होती है कि बजट किसी चुनाव क्षेत्र या किसी एक समूह जैसे कि आयकर दाता समूह के बारे में क्या लेकर आया है । जब कोई बजट आयकर के मामले में कठोर होता है तब अप्रत्यक्ष करों में काफी कमी किये जाने के बावजूद भी, आयकर दाता उस बजट से निराश होता है क्योंकि उसे आयकर में प्रत्यक्ष रुप से कोई लाभ नजर नहीं आता है । अतः बजट पर तत्काल दी गयीं प्रतिक्रियाओं को सावधानी से देखा जाना चाहिये ।

साथ ही प्रत्येक बजट समग्र समष्टिगत आर्थिक वातावरण के परिदृश्य में प्रस्तुत किया जाता है और हम कह सकते हैं कि वह उभरते हुए विकास का प्रतिनिधित्व करता है । बजट प्रक्रिया इस प्रकार आयोजित की जाती है कि वह समग्र समष्टिगत आर्थिक संतुलन को सहज बनाये । अतः बजट एक वर्ष की अल्पावधि के दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया जाता है और उसका उद्देश्य पर्याप्त कुल मांग पैदा करके अर्थव्यवस्था का विकास करना होता है । परन्तु जब कुल मांग तदनुरुपी उत्पाद के साथ नहीं होती है तो मुद्रास्फीतिकारी दबाव बढ़ने लगता है । साथ ही, सरकार भी अपनी प्राप्तियों से ज्यादा हुए व्यय का वित्तपोषण बाजार से उधार लेकर एवं लघु बचतों से करने लगती है । इसे हम घाटे का वित्तपोषण कहते हैं जो सरकार को दिये गये शुद्ध रिज़र्व बैंक ऋण को प्रभावित करता है या सरकार के बैंक ऋण को बढ़ाता है या दोनों ही स्थितियां पैदा करता है । इससे देश की चल निधि और अर्थव्यवस्था में ब्याज दरें प्रभावित होती हैं । खुली अर्थव्यवस्था में ब्याज दरों का परिवर्तन पूरे विश्व से पूंजी के आवागमन में परिवर्तन लाता है अतः बजट का विश्लेषण इन सबको देखते हुए करना चाहिए ।

इस सम्पादकीय का उद्देश्य बजट 2003-2004 पर किसी प्रकार की टिप्पणी करने का नहीं है क्योंकि अब तक पाठकों के पास टीवी, अखबार आदि के माध्यम से व्याख्याओं की बाढ़ सी आ गयी होगी । अपितु यह बेहतर होगा कि बजट प्रक्रिया को समझते हुए उसकी समग्र दिशाएं और व्यापक उद्देश्यों को जाना जाए ।

जैसाकि आप जानते ही हैं भारतीय अर्थव्यवस्था में समग्र आर्थिक सुधारों के कार्यान्वयन के कारण क्रांतिकारी परिवर्तन हो रहे हैं । इन सुधारों का मुख्य उद्देश्य आधारभूत स्तर पर सूक्ष्म (व्यष्टिगत) आर्थिक निर्णयों में आनेवाली अड़चनों एवं व्यवधानों को दूर करना है । बाज़ार के खिलाड़ियों के पास स्वतंत्रता होने के साथ-साथ प्रणाली में उपलब्ध अवसरों का फायदा उठाने एवं गतिशील बाजार से उत्पन्न चुनौतियों से उबरने की क्षमता होनी चाहिये । यही कारण है कि वर्ष दर वर्ष बजट इस सुधार प्रक्रिया को गति देने का प्रयास करते हैं ।

इसमें जड़ता को तोड़कर उचित संरचनात्मक परिवर्तन लाना शामिल है ।

आर्थिक सुधारों का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य है राजकोषीय समेकन प्राप्त करना जिसमें राजकोषीय घाटे को कम करना, कर आधार को बढ़ाना और व्यय को कम करना तथा उसकी प्राथमिकताएं निर्धारित करना शामिल हैं । इस परिप्रेक्ष्य में सकल घरेलू उत्पाद के 5 प्रतिशत से अधिक के राजकोषीय घाटे के आंकड़े राजकोषीय स्थिति की समग्र स्थिरता के संदर्भ में चिंता के कारण हैं । वर्ष दर वर्ष बढ़ता घाटे का स्तर केन्द्रीय सरकार के आंतरिक एवं बाहरी ऋणों में बढ़ोतरी करता है । इसके परिणामस्वरुप, ब्याज भुगतान के कारण राजकोषीय स्थिति एक दुष्चक्र में फंस गयी है । यही स्थिति राज्य सरकारों की भी है ।

बजट घाटा केन्द्र और राज्य सरकारों की उस क्षमता को गंभीर रुप से प्रभावित करता है जिससे वे सरकारी क्षेत्र के पूंजी निर्माण को वित्तपोषित करते हैं जो कई मामलों में निजी क्षेत्र में पूंजी निर्माण के लिये भी जरुरी होता है । इसकी दूसरी समस्या है विकासात्मक व्यय में कमी करना और विकासेतर व्यय में कमी लाने में जटिलता पैदा करना । इससे समष्टिगत आर्थिक स्थिरता लाने के एक साधन के रुप में राजकोषीय नीति भोथरी हो जाती है ।

उपर्युक्त के होते हुए भी इस बार हम वित्तमंत्री को बधाई दें कि उन्होंने अपने बज़ट में बहुत सारी करामातें दिखाई हैं । सबसे महत्वपूर्ण है कर प्रशासन के सरलीकरण के सन्दर्भ में केलकर समिति की सिफारिशों को स्वीकार करना जिससे भेदभाव को कम करने और कर मूल्यांकन में वस्तुनिष्ठता बढ़ाने में बढ़ोतरी हुई है । विभिन्न राज्यों में लगाये जा रहे अलग-अलग बिक्री कर के स्थान पर "वैट" (मूल्य आधारित कर) लागू करने से पूरा भारत एक एकल बाज़ार बन गया है । इससे माल को एक राज्य से दूसरे राज्य में लाने/ले जाने में समय, सामान, पैसे और श्रमशक्ति की बचत होगी । एक बहुत ही उचित कदम जिसे मीडिया में उचित रुप में नहीं दर्शाया गया वो है पिछले बजट में किये गये वादों/शुरु की गयीं योजनाओं के बारे में "कार्रवाई रिपोर्ट" लागू करना । इससे बजट प्रक्रिया में पारदर्शिता लाने में सहायता मिलेगी ।

इस बजट का लक्ष्य दसवीं पंचवर्षीय योजना में अपेक्षित वृद्धि के अनुरूप अर्थव्यवस्था में उच्च वृद्धि दर लाना है । इसमें अन्य बातों के साथ-साथ प्रत्यक्ष एवं परोक्ष कर दरों में कमी करना जिससे उपभोक्ता के पास ज्यादा क्रयशक्ति, विदेशी प्रत्यक्ष निवेश को प्रोत्साहन देना ताकि भारत निवेश के लिए एक आकर्षक देश बने और टेक्सटाइल्स, चीनी, सूचना प्रौद्योगिकी, बायोटेक्नॉलॉजी आदि जैसे कतिपय मुख्य क्षेत्रों में बढ़ोतरी लाने के लिये इन क्षेत्रों को नियंत्रण और प्रतिबंधों के मकड़जाल से मुक्त करना शामिल है । वर्तमान बजट में बैंकिंग प्रणाली को मजबूत करने पर विशेष जोर दिया गया है ताकि निष्क्रिय आस्तियों को कम किया जा सके । कार्पोरेट गवर्नेंस तथा अन्य बेहतर पद्धतियों को लागू करना भी इसमें शाामिल है ।

मैं अपने सम्पादकीय को यह कहते हुए समाप्त करना चाहता हूं कि वर्तमान बजट में बहुत से साहसिक कदम उठाये गये हैं। किसी भी नीति की अंतिम सफलता निजी क्षेत्र की इच्छा और उसके सहयोग पर निर्भर कहती है । इसमें उच्च उत्पादकता को प्राप्त करने के लिये दक्षता में सुधार लाने हेतु अपने आपको बदलना शामिल है । इस सन्दर्भ में एक बैंकर की संगतता दिये गये वित्तीय संसाधनों को इस प्रकार इस्तेमाल करने में है कि वह उसे वास्तविक क्षेत्र में कार्यरत सर्वाधिक दक्ष उद्यमी को ही मिले ।

मैं राष्ट्रीय महत्ता के सन्दर्भ में किये गये प्रयासों की सफलता की कामना करता हूं ।

आपका

अनुचिंतन

अधिक लेख सूचना प्रौद्योगिकी से संबंधित विचारों, विपणन, वित्तीय बाज़ार का सार्वभौमीकरण, विश्व ईक्विटी बाज़ार आदि विषयों पर हों तथा लिपिकों / अधिकारियों की पदोन्नति परीक्षाओं के लिए उपयोगात्मक हों । इसकी अवधि द्वैमासिक हो तो पत्रिका की उपयोगिता और भी बढ़ जाएगी ।

एम. एस. भंडारकर
महाप्रबंधक
सिंडिकेट बैंक
प्रधान कार्यालय, मणिपाल

बैंकिंग चिंतन-अनुचिंतन एक ऐसी पत्रिका है जिससे आर्थिक परिवेश की अद्यतन जानकारियां हमें प्राप्त होती हैं । यह एकमात्र ऐसी पत्रिका है जिसने कंप्यूटर से संबंधित प्रौद्योगिकी विशेषांक जारी किया है । हमारा यह मानना है कि पत्रिका अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में काफी हद तक कामयाब रही है ।

अमिय पाल
37, न्यू महेन्द्र नगर,
राजनांदगांव - 491441

बैंकिंग चिंतन-अनुचिंतन अपने आपमें एक खूबसूरत पत्रिका है । इस पत्रिका में समाविष्ट जानकारी बहुत ही ज्ञानवर्धक है । खासकर सामयिक विषयों पर तथा बैंकिंग क्षेत्र में हो रहे नवीन परिवर्तनों और उत्पन्न हो रही नवीन संकल्पनाओं पर लेख विशेष हैं । एक कंप्यूटर ऑपरेटर की हैसियत से आपका जनवरी - मार्च 2002 का अंक मुझे काफी अच्छा लगा जिसके 'कंप्यूटरीकृत वातावरण में आपदा निवारण ' लेख तथा बैंकिंग परिदृश्य के सारे संकलन अपने आपमें पूर्ण है ।

अशोककुमार चौधरी
स्टेट बैंक ऑफ सौराष्ट्र
मालिया मियाणा शाखा
राजकोट (गुजरात)

पत्रिका की सामग्री दिन प्रतिदिन उत्कृष्ट होती जा रही है और हमारी मान्यता है कि भारतीय बैंकिंग परिवेश में कार्य करनेवाले प्रत्येक कर्मचारी को इस पत्रिका का अध्ययन करना चाहिए । हमें बहुत खुशी है कि आपने इंटरनेट संस्करण के साथ-साथ पत्रिका का प्रकाशन जारी रखा क्योंकि आज भी 36000 से ज्यादा बैंकिंग शाखाएं गांवों में कार्यरत हैं जहां इंटरनेट की कोई सुविधा उपलब्ध नहीं होती ।

उमेशकुमार नीमा
प्रबंधक
दि बैंक ऑफ राजस्थान लि.
मामेर, उदयपुर - 307 025.

पत्रिका में बैंकिंग से जुड़े विभिन्न विषयों के अलावा इनमें दैनंदिन हो रहे कानूनी परिवर्तनों के बारे में भी जानकारी दी जाए ताकि विधिक पक्ष की कमी की प्रतिपूर्ति हो सके । कोटेशन भले ही छोटे हों परन्तु हर लेख के अन्त में हों । सुविज्ञ पाठकों को जोड़ने के लिए 'प्रश्नोत्तरी ' अथवा 'पूछताछ 'या 'क्या आप ये भी नहीं जानते ' इन शीर्षकों से नए कॉलम प्रारंभ किए जा सकते हैं । पत्रिका के साथ छोटे आकार के स्पेशल सप्लीमेंट (किसी एक विषय पर) भी निकाले जा सकते हैं ।

गोपाल कृष्ण निगम
'लक्ष्मी श्री'
अलवरधाम नगर सांवेर रोड,
उज्जैन (म.प्र.) 456 010

पत्रिका का अक्तूबर-दिसंबर 2002 अंक देखा । एक ओर जहां इसका आकार, साज-सज्जा बाह्य आवरण आकर्षक होने के साथ-साथ सार्थक है वहीं दूसरी ओर इसमें बैंकिंग की व्यावहारिक समस्याओं को जिस खूबी के साथ उकेरा गया है वह सराहनीय है । जोखिम प्रबंधन जैसे नीरस और जटिल विषय के विभिन्न पक्षों को अत्यंत सक्षमता और सहजता के साथ पाठकों के सामने रखा गया है जो सुरुचिपूर्ण ढंग से पाठक का ज्ञानवर्धन करने में स्वतः समर्थ है ।

सुषम अग्रवाल
सहायक प्रादेशिक प्रबंधक
ओरियन्टल बैंक ऑफ कॉमर्स
करोलबाग , नई दिल्ली- 110 005.

बैंकिंग चिंतन-अनुचिंतन वस्तुतः एक सारगर्भित, ज्ञानवर्धक एवं सरल भाषा में लिखित हिंदी की सर्वश्रेष्ठ बैंकिंग पत्रिका है । मेरे विचार से इसमें निम्नलिखित का समावेश किया जा सकता है - i) 'आर्थिक समाचार ' स्तंभ जोड़कर त्रैमासिक आधार पर बैंकिंग एवं वित्त संबंधी जानकारी दी जा सकती है । ii) JAIIB, CAIIB तथा MBA से संबंधित विषयों का समावेश किया जा सकता है । iii) विभिन्न आर्थिक विषयों से संबंधित त्रैमासिक प्रतियोगिता का आयोजन किया जा सकता है ।

किशोरी दास
प्रधान खजांची
बैंक ऑफ बड़ौदा
उमराण शाखा
नंदुरबार- 425 418

पत्रिका के जनवरी-मार्च 2003 अंक से 'साक्षात्कार ' नामक नया स्तंभ प्रारंभ करना सराहनीय है । इसके माध्यम से वरिष्ठ बैंकरों के विचार पत्रिका के पाठकों तक पहुंचेंगे । समग्रतः चिन्तन-अनुचिन्तन विविध सामग्री के साथ अपने पाठकों में काफी लोकप्रिय है । बेहतर प्रस्तुतीकरण के लिए संपादक मंडल बधाई का पात्र है ।

धर्मराज मिश्र
राजभाषा अधिकारी
भारतीय बैंक संघ
मुंबई

मुझे बैंकिंग चिंतन-अनुचिंतन पत्रिका के अंक की प्रतीक्षा रहती है जिसमें एक तो बैंकिंग क्षेत्र की जानकारी पर्याप्त आंकड़ों सहित प्राप्त होती है और दूसरे भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा जारी परिपत्रों, सूचनाओं की भी जानकारी प्राप्त होती है । बैंकिंग क्षेत्र में जारी की जा रही यह पत्रिका सर्वोत्तम है जो नवीनतम जानकारी प्रदान करती है और कर्मचारियों के ज्ञान में वृद्धि करती है ।

राजकपूर
पंजाब नैशनल बैंक
बुटाना (सोनीपत)
हरियाणा

लेख आमंत्रित हैं - लाभप्रदता विशेषांक

बैंकिंग चिंतन -अनुचिंतन का अक्तूबर-दिसंबर 2003 अंक **'लाभप्रदता विशेषांक'** होगा जिसके लिए लाभप्रदता से जुड़े विभिन्न पहलुओं जैसे कि ऋण संविभाग, आयोजना, बैंकिंग उत्पाद, अनर्जक आस्तियां, बाज़ार (विदेशी मुद्रा बाज़ार, मुद्रा बाज़ार, आयात निर्यात जैसे क्षेत्र) जोखिम, प्रबंधगत आयोजना, ग्राहक सेवा, अर्थव्यवस्था में उदारीकरण, मानव संसाधन, तकनीकी विकास, ई-व्यापार, प्रतिष्ठान की साख, आदि पर सारगर्भित लेख आमंत्रित हैं । लेख पत्रिका के स्वरूप के अनुकूल तथा मौलिक होने चाहिए और इससे पहले अन्यत्र प्रकाशित नहीं होने चाहिए । प्रकाशित लेखों पर उचित मानदेय का भी प्रावधान है ।

लेख 15 जुलाई 2003 तक हमें मिल जाने चाहिए ।

साक्षात्कार

प्रतिस्पर्धात्मक वातावरण लघु उद्योगों के लिए चुनौती

'साक्षात्कार' के महत्व को समझते हुए प्रारंभ किए गए इस स्तंभ का जो व्यापक स्वागत हुआ उसने इसकी उपयोगिता सिद्ध कर दी । पाठकों के पत्र आदि के माध्यम से प्राप्त हुई प्रतिक्रियाएं हमें इस स्तंभ को और अधिक रोचक एवं व्यापक बनाने के लिए प्रेरित करेंगी ।

आइए, इस बार आपकी मुलाकात करवाते हैं - सिडबी (भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक) के अध्यक्ष और प्रबंध निदेशक ***श्री पी. बी. निम्बालकर** जी से, जिन्होने लघु उद्योगों के संवर्धन में मिशनरी भावना से न केवल नई-नई योजनाएं प्रारंभ की बल्कि उनके तकनीकी उन्नयन में भी पूरा योगदान दिया है ।

श्री प्रकाश बी. निम्बालकर ने पिछले 30 वर्षों में अनुभवों की कई सीढियां पार कीं और आज प्रतिष्ठित बैंकर के रूप में जाने जाते हैं । भारतीय रिज़र्व बैंक से अपनी बैंकिंग की यात्रा प्रारंभ करके वे भारतीय औद्योगिक विकास बैंक से जुड़े और फिर वहां वे लघु उद्योग क्षेत्र के लिए गठित किए जानेवाले शीर्ष बैंक (सिडबी) की कल्पना को साकार करनेवाली प्रबंधकीय टीम में शामिल हुए ।

वाणिज्य और कानून के स्नातक श्री निम्बालकर आईआईबी के एसोसिएट भी हैं । वे विशिष्ट कार्यक्रमों के संदर्भ में जापान विकास बैंक, टोक्यो और हॉवर्ड लॉ स्कूल, बोस्टन से भी जुड़े रहे हैं । उन्होंने सिडबी की तरफ से अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व बैंक समूह और एशियन विकास बैंक में भी प्रतिनिधित्व किया है ।

*इस बीच सेवानिवृत्त

सिडबी की स्थापना 1990 में एक पुनर्वित्त संस्था के रूप में हुई थी । अब इसने स्वयं को एक बहुआयामी संस्था (अल्पवित्त, उद्यम पूंजी, परियोजना वित्त, प्रौद्योगिकी विकास, लघु उद्योग-उत्पादों का विपणन, निर्यात वित्तपोषण, फैक्टरिंग आदि) के रूप में रूपांतरित कर लिया है । इसके विकास और रूपांतरण के बारे में आपका क्या विचार है?

* मैं सिडबी के स्वरूप में हुए परिवर्तन का संक्षिप्त परिचय आपको देना चाहता हूँ, जिसने लघु उद्योग क्षेत्र के उद्योगों के संवर्धन, वित्तपोषण एवं विकास के लिए एक शीर्ष वित्तीय संस्था के रूप में 1990 में अपने परिचालन शुरू किए थे । यद्यपि आरंभ में, सिडबी मुख्यतः एक पुनर्वित्त संस्था के रूप में रहा, तथापि हमारा भरसक प्रयास रहा है कि लघु उद्योग क्षेत्र की निरंतर वृद्धि के लिए इस क्षेत्र को उचित मात्रा में वित्तीय एवं सहयोग सेवाएं उपलब्ध कराई जाएँ । इसे ध्यान में रखते हुए, परियोजना वित्त, बिल वित्त, प्रौद्योगिकी-उन्नयन, ऋण आधारित कैपिटल सब्सिडी, विपणन व निर्यातों के माध्यम से सिडबी प्रत्यक्ष वित्तपोषण पर अधिक बल दे रहा है । ये सेवाएँ हमारी 41 शाखाओं के नेटवर्क के माध्यम से प्रदान की जा रही हैं । इसी दिशा में एक कदम आगे बढ़ाते हुए हमने सिडबी वेंचर कैपिटल लिमिटेड, लघु उद्यम प्रौद्योगिकी ब्यूरो और लघु उद्योगों के लिए क्रेडिट गारंटी निधि ट्रस्ट जैसे सहायक संस्थानों की स्थापना की है, ताकि हम इस क्षेत्र के विविध उप-क्षेत्रों की विशिष्ट जरूरतों को पूरा कर सकें ।

सिडबी ने निर्धनों को आय-अर्जक गतिविधियों हेतु संस्थागत ऋण उपलब्ध कराने के उद्देश्य से सिडबी अल्प ऋण कोष (Foundation for micro credit) भी स्थापित किया है, जो कुछ चुनिंदा अल्प ऋण संस्थाओं के माध्यम से कार्य कर रहा है । मुझे यह कहते हुए प्रसन्नता हो रही है कि सिडबी उद्योगों को अपनी सहायता पहुँचाने तथा छोटे से छोटे उप-क्षेत्र तक इसे उपलब्ध कराने के अपने प्रयासों में सफल रहा है । इस क्षेत्र को एक व्यापक स्तर पर वित्तीय सहायता उपलब्ध कराने की हमारी नीति के काफी अच्छे परिणाम प्राप्त हुए हैं और क्षेत्र के चहुंमुखी विकास में तेजी आई है, जिससे यह क्षेत्र समग्र औद्योगिक क्षेत्र में सबसे अग्रणी रहा है । साथ ही, हमारी इस नीति ने लघु उद्योगों को अधिक जीवंत,

उत्पादक व प्रतियोगी इकाइयों के रूप में परिवर्तित होने में मदद की है, ताकि वे भूमंडलीकरण (globalisation) की चुनौतियों का सामना कर सकें ।

सिडबी की दो परिचालनगत कार्यनीतियां हैं :

क. लघु उद्योगों को वित्तीय सहायता की मात्रा बढ़ाना ।

ख. लघु उद्योगों की वर्तमान क्षमताओं में सुधार करना ।

इसमें आपको कहाँ तक सफलता मिली है ?

* जहां तक इस क्षेत्र को सहायता की मात्रा बढ़ाने का आपका प्रश्न है, मैं उल्लेख करना चाहूंगा कि नवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान, लघु उद्योग क्षेत्र की 36,500 करोड़ रुपए की दीर्घावधि ऋण संबंधी आवश्यकता की तुलना में, इस अवधि में संचयी ऋण की मात्रा 38,000 करोड़ रुपए रहने का अनुमान है। लघु उद्योग क्षेत्र के लिए शीर्ष वित्तीय संस्था होने के नाते इस क्षेत्र की सावधि ऋण की आवश्यकताओं को पूरा करते समय सिडबी, बाजार के उभरते हुए रूझानों व जरूरतों के अनुसार अपनी नीतियों का पुनर्भिमुखीकरण (reorientation) करता रहा है। सिडबी की स्थापना से लेकर मार्च, 2002 तक संचयी मंजूरियाँ 75,255 करोड़ रुपए और संवितरण 52,312 करोड़ रुपए रहे हैं व इनमें 13 प्रतिशत व 11 प्रतिशत की सम्मिश्र (compound) वार्षिक वृद्धि दर्ज की गई है।

सिडबी ने एक संतुलित दृष्टिकोण अपनाया है । एक ओर जहां आधुनिक लघु इकाइयों को राष्ट्रीय व वैश्विक परिदृश्य में अधिक प्रतिस्पर्धी बनाने में सहायता की जाती है, वहीं दूसरी ओर सबसे छोटी लघु इकाइयों की क्षमता व उत्पादकता में सुधार लाने की ओर विशेष ध्यान दिया जाता है, जिनमें अतिलघु, ग्रामोद्योग, कुटीर उद्योग व विकेंद्रित क्षेत्र में कारीगर आधारित इकाइयाँ शामिल हैं। इन वर्षों में, संवर्द्धन व विकासपरक गतिविधियों के अंतर्गत सिडबी के प्रयासों के छह प्रमुख क्षेत्र रहे हैं - ग्रामीण औद्योगिकीकरण पर बल देते हुए उद्यम संवर्द्धन, लघु उद्योग क्षेत्र में मानव संसाधन विकास, प्रौद्योगिकी उन्नयन, पर्यावरण एवं गुणवत्ता प्रबन्ध, विपणन संवर्द्धन और सूचना का प्रसार। इस बहुआयामी भूमिका में कार्य करते हुए सिडबी एक मजबूत व जीवंत संस्था के रूप में सामने आई है ।

भूमंडलीकरण के कारण निरंतर बढ़ती हुई प्रतिस्पर्धा (आंतरिक व बाह्य) को देखते हुए लघु उद्योग क्षेत्र का भविष्य क्या होगा ?

* लघु उद्योगों पर भूमंडलीकरण की प्रक्रिया और विश्व व्यापार संगठन के समझौतों का प्रभाव सकारात्मक और नकारात्मक, दोनों ही प्रकार से पड़ेगा। सकारात्मक पहलू यह है कि व्यापार प्रतिबंधों के हटने, तकनीकी व मार्केटिंग सहयोगों हेतु अधिक अवसरों एवं बड़ी व बहुराष्ट्रीय कंपनियों से आउटसोर्सिंग व कॉंट्रेक्ट विनिर्माण-व्यवस्था स्थापित करने से लघु व अतिलघु इकाइयों को विश्व के बाजारों से स्वयं को जोड़ने में मदद मिलेगी। चूंकि आयात नीतियों में उदारीकरण व कस्टम शुल्कों में कमी से गुणवत्तापूर्ण कच्चा माल प्रतियोगी दामों पर उपलब्ध होगा, अतः लघु उद्योग अपने उत्पादों की गुणवत्ता में सुधार भी ला सकेंगे और अपने माल की मूल्यपरक वसूलियों को बढ़ा सकेंगे।

नकारात्मक पक्ष यह है कि कम लागत वाले उत्पादों के आयातों में वृद्धि से घरेलू बाजारों में लघु उद्योगों के लिए एक गंभीर खतरा उत्पन्न हो सकता है। पर्यावरण संरक्षण मानकों के पालन हेतु विश्व के बढ़ते दबावों और विनिर्माण में अंतरराष्ट्रीय स्तर की सर्वोत्तम कार्यप्रणालियों जैसे गैर-शुल्क अवरोधों (implication of non-tariff barriers) के आरोपित होने से लघु उद्योग दरकिनार हो जाएंगे। ट्रिप्स समझौता और इंडियन पेटेंट एक्ट में संशोधनों के कारण उत्पाद-पेटेंट लागू होने से, लघु उद्योग प्रतिवर्तित (reverse) इंजीनियरिंग द्वारा इन पेटेंट उत्पादों का विनिर्माण नहीं कर पाएंगे। शुरू में इससे निर्यातों और घरेलू बाजारों में उनकी हिस्सेदारी पर प्रभाव पड़ेगा, लेकिन इसका दूरगामी परिणाम यह होगा कि इससे वे नए उत्पाद एवं प्रक्रियाओं को विकसित करने के लिए प्रेरित होंगे, और इस प्रकार उनके कौशल का उपयोग अनुसंधान और विकास, नए उत्पाद और डिज़ाइन तैयार करने में होगा।

कड़ी प्रतिस्पर्धा के इस वातावरण में, लघु उद्योग अपने बलबूते पर स्वयं को पुनः व्यवस्थित करने में कठिनाई महसूस करेंगे और यह बेहतर होगा कि वे अनुषंगी इकाई के रूप में अथवा बड़ी इकाइयों के विक्रेताओं के रूप में कार्य करें। अपेक्षाकृत बड़े आकार की इकाइयाँ घरेलू और निर्यात बाज़ारों, दोनों में नए क्षेत्रों की तलाश कर सकती हैं और विशेषीकृत बाजारों को नए-नए उत्पाद उपलब्ध कराने के माध्यम से प्रभावी रूप से प्रतिस्पर्धा कर सकती हैं।

भूमंडलीकरण और विश्व व्यापार संगठन के कारण नियामक ढांचे में बहुत परिवर्तन आए हैं। इस परिदृश्य में, ग्रामीण क्षेत्र में स्थित लघु उद्योगों पर लागू होने वाले विनियमों में किस प्रकार के बदलाव होंगे ?

* भूमंडलीकरण व डब्ल्यूटीओ की अनिवार्यताओं के परिणामस्वरूप, भारत सरकार ने पहले ही कई नीतिगत उपाय क्रियान्वित किए हैं और इस क्षेत्र की प्रतियोगी क्षमता को बढ़ाने के उद्देश्य से कुछ वित्तीय प्रोत्साहन दिए हैं। हस्त औजार जैसे कुछ प्रमुख एवं निर्यातोन्मुख क्षेत्रों में लघु उद्योगों की निवेश-सीमा 1 करोड़ रुपए से बढ़ाकर 5 करोड़ रुपए कर दी गई है। खादी एवं ग्रामोद्योग क्षेत्र की कई इकाइयों के लिए सरकार ने प्रोत्साहनों का एक विशेष पैकेज तैयार किया है। इन प्रोत्साहनों में शामिल हैं - ग्रामीण क्षेत्रों हेतु एकीकृत मूलभूत ढांचा विकास योजना के अंतर्गत मूलभूत ढांचागत सहायता, राष्ट्रीय ग्रामीण उद्योगीकरण कार्यक्रम के अंतर्गत सामूहिक सुविधाओं सहित समूह-विकास और बाज़ार विकास सहायता। इसके अतिरिक्त, ग्रामीण क्षेत्रों में अतिलघु उद्यमों के संवर्द्धन हेतु भी सिडबी ने कई प्रयास किए हैं, जैसे ग्रामीण उद्योग कार्यक्रम, ग्रामीण क्षेत्रों में प्रौद्योगिकी-उन्नयन कार्यक्रम, ग्रामीण प्रौद्योगिकी-प्रदर्शन कार्यक्रम तथा प्रशिक्षण-सह-उत्पादन केन्द्रों की स्थापना।

मेरे विचार से, यदि ग्रामीण उद्यमों को मजबूत बनाना है, तो एक ऐसी पृथक नीति बनानी होगी, जो समूह अभिगम (Cluster Approach) पर आधारित हो। इससे कृषि-प्रसंस्करण, उद्यान-विज्ञान (Horticulture) व अन्य संबद्ध उद्योगों में लगे हुए ग्रामीण उद्यमों को, शहरी क्षेत्रों के बड़े व लघु उद्योगों के साथ एकीकृत किया जा सकेगा। ग्रामीण क्षेत्र में कृषि-उत्पादों के संग्रहण व भंडारण और प्रसंस्करण इकाइयों तक उन्हें पहुँचाने के लिए मूलभूत ढांचे को निजी निवेश भी उपलब्ध कराना होगा। लाभप्रद ग्रामीण बाजार विकसित करने के लिए, उपयुक्त नीतिगत प्रयासों द्वारा ग्रामीण क्षेत्र में पर्याप्त स्व-रोजगार अवसरों का सृजन करना होगा।

जापान अपने लघु उद्योगों के कारण ही आज दुनिया में जाना जाता है, ऐसा भारत में क्यों नहीं हुआ ?

* जापान में विनिर्माण क्षेत्र के वे उद्यम लघु व मध्यम उद्यम कहलाते हैं, जिनमें कार्यरत व्यक्तियों की संख्या 300 तक हो अथवा जिनमें 100 मिलियन येन तक आस्ति पूंजीकरण हो। इसके अतिरिक्त, जापान में कार्यरत लोगों की 54.16 मिलियन संख्या (प्राथमिक उद्योगों में कार्य करने वालों के अलावा) में से, लगभग 42.27 मिलियन या 78% लोग लघु व मध्यम उद्यमों में कार्यरत हैं और ये कुल विनिर्माण में 51% तक योगदान करते हैं। इससे यह पता चलता है कि जापान के लघु व मध्यम उद्यम, बड़ी एवं बहुराष्ट्रीय कंपनियों के साथ सह-अस्तित्व में हैं और उनकी प्रौद्योगिकी भी उतनी ही आधुनिक है। साथ ही, उनकी पूंजी और श्रम-उत्पादकता भी अधिक है।

भारत के लघु उद्योगों का आकार, जापान के लघु व मध्यम उद्यमों की तुलना में छोटा है। चूँकि लगभग 90% इकाइयाँ अति लघु क्षेत्र में हैं, इनकी प्लांट व मशीनरी की लागत केवल 25 लाख रुपए तक है और इस प्रकार की लघु इकाई में औसतन 5 से 6 लोग काम करते हैं। लघु उद्योग क्षेत्र की परिभाषा में आने वाली शेष 10% इकाइयों का आकार अपेक्षाकृत बड़ा है, जो कि हाल में ही हस्त-औजारों जैसे लघु उद्योग क्षेत्र के कुछ उद्योगों की निवेश-सीमा को 5 करोड़ रुपए तक बढ़ाने की अनुमति देने के फलस्वरूप है। विकास आयुक्त (लघु उद्योग) द्वारा 1992-93 में कराए गए एक सर्वे के अनुसार, 78% इकाइयाँ स्वामित्व प्रतिष्ठान के अन्तर्गत आती हैं। भारत में लघु उद्योगों के आकार एवं आरक्षण और संरक्षण की पूर्व नीतियों ने लघु इकाइयों के विकास को सीमित कर दिया है। इसके परिणामस्वरूप, खर्चीले उत्पादन-स्तर के परिचालनों, पुरानी प्रौद्योगिकी, निम्न श्रम-उत्पादकता और उत्पाद की खराब गुणवत्ता के कारण क्षमता कम हो गई है। इनके साथ ही अन्य बाधाएं भी हैं, जैसे - मूलभूत ढांचागत सहायता का अभाव, प्रभावी मार्केटिंग रणनीतियों की कमी और वित्तीय सहायता का अभाव।

भारत में आज जरूरत इस बात की है कि लघु व मध्यम उद्यमों को बढ़ावा दिया जाए। इसके लिए उपयुक्त नीतिगत प्रयासों के माध्यम से उन्हें एक समान दर्जा दिया जाना चाहिए, जिसका उद्देश्य उनकी गुणवत्ता में वृद्धि और समग्र प्रतिस्पर्धी क्षमता में सुधार करना हो।

नीति निर्माता सामान्यतः बड़े उद्योगों के बारे में सोचते हैं, क्योंकि उनमें रोजगार और उत्पादन है। ऐसे में लघु उद्योग या तो उनके पूरक के रूप में काम करते हैं या फिर पूरी तरह उन पर निर्भर हो जाते हैं और उनकी वृद्धि बड़े उद्योगों से जुड़ जाती है। ऐसे में उनका अपना अस्तित्व क्या है ?

* देखिए, लघु उद्योग क्षेत्र का यह चित्रण सही नहीं है। आजादी के तत्काल बाद सरकार ने, विशेष रूप से लघु उद्योगों के विकास व संवर्द्धन को ध्यान में रखते हुए कई नीतियों की घोषणा की, ताकि स्थानीय संसाधनों व कौशल का उपयोग हो सके और रोजगार-सृजन के साथ-साथ उद्योगों को जगह-जगह स्थापित किया जा

सके। लघु उद्योग क्षेत्र की समग्र नीति में, अतिलघु व कुटीर क्षेत्र की इकाइयों के लिए भी विशेष पैकेज शामिल किए गए हैं। भूमंडलीकरण की चुनौतियों और डब्ल्यूटीओ की अनिवार्यताओं को ध्यान में रखते हुए सरकार ने अपनी नीतियों का केंद्रबिंदु संरक्षण, आरक्षण एवं रियायतों से हटाकर संवर्द्धन, क्षमता-विस्तार एवं चयनात्मक अनारक्षण पर केंद्रित किया है।

एक ओर जहां, ऑटो-पुर्जे जैसे कुछ उप-क्षेत्र बड़े उद्योगों के विकास से जुड़े हैं, वहीं दूसरी ओर मध्यवर्तियों, तैयार माल या उपभोक्ता वस्तुओं जैसे कुछ क्षेत्रों में लघु उद्योग आत्मनिर्भर हैं। ये लघु उद्योग क्षेत्रीय या स्थानीय बाजारों की जरूरतों को अपने स्थानीय ब्रांड के द्वारा पूरा कर रहे हैं अथवा अपने विशेष रूप से तैयार उत्पादों के द्वारा लघु उद्योगों ने स्थापित निर्यात बाज़ारों में भी अपनी जगह बनाई है। आईटी सॉफ्टवेयर, रत्न एवं आभूषण, लैदर फुटवियर एवं परिधान और खिलौनों जैसे कुछ क्षेत्र ऐसे हैं, जहाँ लघु उद्योग इकाइयाँ, बड़ी विनिर्माण इकाइयों पर निर्भर हुए बिना केवल अपने बल पर प्रतिस्पर्धा कर रही हैं। अतः, पहले की ही तरह लघु उद्योग अपनी इन दोनों भूमिकाओं में उन्नति और विकास करते रहेंगे।

हम बैंकवाले एक बंधे बंधाये ढांचे में ही काम करते हैं, कभी-कभी हमें लगता है कि ऐसे होना चाहिए या फिर हम ऐसा कर सकते थे। क्या ऐसा कोई सुझाव आपके पास है, जिससे लघु उद्योग क्षेत्र का कायाकल्प हो सके।

* आज लघु उद्योग क्षेत्र की नीतियों में संरक्षण के स्थान पर संवर्द्धन पर बल दिया जा रहा है। यह एक सोची-समझी शुरूआत है और इसका उद्देश्य इस क्षेत्र का समेकन व रूपांतरण करना है, जो भूमंडलीकरण की चुनौतियों का सामना करने के लिए अत्यंत आवश्यक है। इस दिशा में लघु उद्योग मंत्रालय एवं सिडबी द्वारा पहले ही कई संवर्द्धनशील कदम उठाए जा चुके हैं, ताकि यह क्षेत्र एक उच्चतर और स्थाई विकास के मार्ग पर अग्रसर हो सके। दसवीं योजना के लिए लघु उद्योग क्षेत्र के संबंध में गठित कार्यदल ने इस क्षेत्र के लिए 12% वार्षिक वृद्धि की परिकल्पना की है, जो जीडीपी (सकल घरेलू उत्पाद) में 8% और औद्योगिक क्षेत्र में 10% की अनुमानित वृद्धि पर आधारित है। यह उच्च वृद्धि केवल तभी प्राप्त की जा सकेगी, यदि लघु इकाइयों की आधारभूत क्षमताओं को बढ़ावा देते हुए उन्हें, अंतरराष्ट्रीय स्तर की गुणवत्ता वाली प्रतिस्पर्धी इकाइयों में रूपांतरित कर दिया जाए। साथ ही, रोजगार-अवसरों का भी सृजन किया जाए।

विकसित देशों की तरह भारत में भी लघु उद्योगों को ऐसे लघु व मध्यम उद्यमों में पुनर्गठित किए जाने की आवश्यकता है, जिनका आकार अपेक्षाकृत बड़ा हो, आधुनिकतम प्लांट व मशीनरी में और अधिक निवेश हो और यह निवेश अन्य बड़ी इकाइयों अथवा विदेशी सहयोग द्वारा किए जाने पर कोई पाबंदी न हो। इससे बड़े उद्योगों और लघु इकाइयों के मध्य परस्पर स्वस्थ संबंध स्थापित होगा। ऐसे लघु उद्योग, जो इस प्रकार के रणनीतिक सहयोग की स्थिति में नहीं है, उनका विकास समूहीकरण के माध्यम से, समूह मॉडल में निहित प्रतिस्पर्धा और सहयोग के सिद्धांतों का अनुसरण करते हुए किया जा सकता है।इस मॉडल की सफलता के लिए प्रयास पहले से ही जारी हैं, किन्तु इन प्रयासों में तेजी लाए जाने की जरूरत है और यह कार्य मूलभूत ढांचे के उन्नयन, क्षमता-निर्माण, उद्योग संघों को मजबूत बनाने, ब्रांड-निर्माण, लक्ष्योन्मुख ऋण-वितरण, एवं अन्य समूह विशिष्ट कार्यक्रमों के द्वारा किया जा सकता है।

मार्च, 2002 तक निवल बैंक ऋण का 12.5% लघु उद्योगों को दिया गया था। क्या यह पर्याप्त लगता है ?

* निवल बैंक ऋण के एक हिस्से के रूप में लघु उद्योग क्षेत्र को दिया गया ऋण, जो मार्च, 1998 के अंत तक 17.3 प्रतिशत (46,041 करोड़ रुपए) था, मार्च, 2001 के अंत में घटकर लगभग 14 प्रतिशत (60,319 करोड़ रुपए) और मार्च, 2002 के अंत तक घटकर लगभग 12 प्रतिशत (49, 700 करोड़ रूपए) रह गया है। लघु उद्योग क्षेत्र को दिए जा रहे निवल बैंक ऋण की वृद्धि में भी वर्ष दर वर्ष कमी आई है। दसवीं पंचवर्षीय योजना में लघु उद्योग क्षेत्र में 12 प्रतिशत की वृद्धि अनुमानित है, जिसके लिए मौजूदा स्तर से काफी अधिक ऋण-वितरण की आवश्यकता होगी। विश्व स्तर पर उभरती हुई चुनौतियों ने, वित्तीय प्रणाली के विभिन्न घटकों के बीच सामंजस्य (realignment) की जरूरत पर ध्यान केन्द्रित किया है। विशेषकर राज्य वित्तीय निगमों को अपनी पुनर्संरचना करनी होगी और स्वयं को मजबूत बनाना होगा।

दसवीं पंचवर्षीय योजना के अंतिम वर्ष में लघु उद्योग क्षेत्र की अनुमानित ऋण आवश्यकताओं के अनुसार, 1,23,000 करोड़ रुपए कार्यशील पूंजी के लिए और 63,000 करोड़ रुपए सावधि ऋण के लिए आवश्यक होंगे। हालांकि, यह एक बड़ा लक्ष्य है, किन्तु मुझे

विश्वास है कि सिडबी के नेतृत्व में, हमारी वित्तीय प्रणाली इस क्षेत्र की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए स्वयं को तैयार कर लेगी।

लघु उद्योग धीरे-धीरे समाप्त होने की कगार पर पहुंच रहे हैं। उनके रूप में परिवर्तन आ रहा है। ये किस प्रकार के संकेत हैं ?

* यह कहना सही नहीं है कि लघु उद्योग विलुप्त हो रहे हैं अथवा समाप्त होने की कगार पर खड़े हैं । विश्व व्यापार संगठन के बाद के दौर में, लघु उद्योग क्षेत्र वर्तमान में एक संरचनागत रूपांतरण की प्रक्रिया से गुजर रहा है। उदारीकरण और भूमंडलीकरण की प्रक्रिया ने नए अवसरों के द्वार खोले हैं और लघु उद्योगों की पहुँच अंतरराष्ट्रीय बाजारों तक बना दी है। अब समय आ गया है कि और अधिक प्रतिस्पर्धी क्षमता अर्जित करने के लिए भारत में लघु एवं मध्यम उद्यमों की श्रेणी सृजित की जाए और इसे वैश्विक रुझानों के अनुकूल विकास करने के लिए प्रेरित किया जाए। आकार में विस्तार और क्षमताओं का अधिकतम उपयोग करते हुए परिचालनों के स्तर में वृद्धि के एक स्वाभाविक परिणाम के रूप में, लघु एवं मध्यम उद्यमों के निगमीकरण का मार्ग प्रशस्त होगा। इस प्रक्रिया से यह क्षेत्र वैश्विक बाज़ारों के साथ एकीकृत होगा, जिससे विदेशी निवेश और प्रौद्योगिकी अंतरण में वृद्धि होगी और बाज़ार में उनकी हिस्सेदारी बढ़ेगी। साथ ही, इससे वित्त के अन्य रास्तों को तलाशने की उनकी क्षमता को भी बल मिलेगा। यदि समुचित नीतिगत परिवर्तन किए जाते हैं, तो आगे जाकर ये उद्यम पूंजी बाजारों (capital markets) में भी अपनी पहुँच बना सकते हैं।

बैंकिंग चिंतन-अनुचिंतन के पाठकों के लिए आपका क्या संदेश है ?

* मैं कहना चाहूँगा कि व्यापक तौर पर अर्थव्यवस्था और विशेष रूप से औद्योगिक क्षेत्र के लिए यह एक संकट का समय है। हमारा प्रयास है कि हम औद्योगिक क्षेत्र को मजबूत बनाएं और विशेष रूप से लघु और अतिलघु उद्योगों को मजबूत बनाने के लिए सभी संबद्ध संस्थाओं के सामूहिक प्रयास बहुत महत्वपूर्ण हैं। राष्ट्रीय स्तर पर, सभी व्यक्तियों, उद्यमियों, संस्थाओं और देश में औद्योगिक विकास को प्रोत्साहन देने वाली सभी एजेंसियों से सहयोग का अनुरोध है।

प्रस्तुतकर्ता : पुष्पकुमार शर्मा

स्टेपल करने से खराब होते हैं करेंसी नोट

करेंसी नोटों को खराब होने से बचाने के लिए तथा नोटों को बहुत अधिक बार स्टेपल किये जाने और नोटों पर लिखे जाने के बारे में जनता की शिकायतों के उत्तर में रिज़र्व बैंक ने जनहित में एक निदेश जारी करके करेंसी नोटों / नोट पैकटों को स्टेपल करने तथा करेंसी नोटों पर लिखने पर प्रतिबंध लगा दिया है ।

रिज़र्व बैंक ने पहली जनवरी 2003 से स्टेपल किये हुए नोट/नोटों के पैकेट स्वीकार करना बंद कर दिया है ।

सरकारी क्षेत्र के सभी बैंकों, निजी क्षेत्र के बैंकों, सहकारी बैंकों, विदेशी बैंकों, ऋण सोसाइटियों, सरकारी विभागों और जनसाधारण को सूचित किया गया है कि वे करेंसी नोट/नोट पैकेट स्टेपल न करें तथा नोटों पर कुछ न लिखें । बैंकों से अनुरोध किया गया है कि वे इस निदेश का अनुपालन करें तथा जनता को स्टेपल न किये गये केवल अच्छे नोट जारी करें ताकि जनता भी बैंकों से केवल अच्छे और स्टेपल न किये गये नोटों के लिए आग्रह करे ।

विदेशी मुद्रा नियंत्रण व विनियंत्रण

डॉ. दलसिंगार यादव
सहायक महाप्रबंधक (राज.)
विदेशी मुद्रा नियंत्रण विभाग
भारतीय रिजर्व बैंक, मुंबई.

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद देश में **निदेशित अर्थव्यवस्था** का मॉडल अपनाया गया । भारतीय रिज़र्व बैंक सरकार की एक शाखा के रूप में **विनियामक** एजेंसी की बजाय शासक की भूमिका निभाता रहा । परंतु बीसवीं शताब्दी के अंत में जब देश में आर्थिक संकट आया, निर्यात / आयात के संतुलन के लिए भुगतान की संकट घड़ी आई तो देश ने नए सिरे से विचार करना प्रारंभ किया। विश्व व्यापार के संदर्भ में उदारीकरण की प्रक्रिया की शुरुआत हुई। उसके बाद किए गए उपायों के कारण देश में डॉलर की आवक बढ़ने लगी। कभी देश में डॉलर दिवास्वप्न की तरह था और आज डॉलर की बहार है। उसकी आवक निर्बाध रूप से हो रही है।

अब यदि हमारे पास डॉलर की आवक निर्बाध हो और उसका उचित और समयानुसार उपयोग न हो या उसका प्रबंध समयानुरूप न हो तो देश की अर्थव्यवस्था के लिए भी खतरा उत्पन्न हो सकता है।

अब यदि हमारे पास डॉलर की आवक निर्बाध हो और उसका उचित और समयानुसार उपयोग न हो या उसका प्रबंध समयानुरूप न हो तो देश की अर्थव्यवस्था के लिए भी खतरा उत्पन्न हो सकता है।अतः सरकार ने फ़ेरा के स्थान पर फ़ेमा लागू किया है और उसके तहत नियंत्रण **विनियंत्रण** की बयार सी बहने लगी है। विदेशी मुद्रा पर लगे बंधन खुलने लगे हैं।

फ़ेमा की जरूरत

फ़ेमा का उद्देश्य विदेशी व्यापार में सहायक होना और भारत में कानून के मुताबिक विदेशी मुद्रा बाजार का विकास एवं संवर्धन करना है। डॉलर की निरंतर आवक के प्रबंध के विचार से कुछ मूलभूत सुविधाएँ प्रदान की गई हैं तथा अनिवासियों एवं भारतीय मूल के व्यक्तियों को डॉलर संबंधी कुछ जमा योजनाओं की घोषणा की गई है। पात्र व्यक्ति उन योजनाओं का लाभ उठा सकते हैं। यदि आप अनिवासी भारतीय (एनआरआई) अथवा भारतीय मूल के व्यक्ति (पीआईओ) हैं तो आप निवेश तथा जमा की निम्नलिखित सुविधाएं प्राप्त कर सकते हैं -:

जमा

✱ आप किसी भी प्राधिकृत व्यापारी के पास भारत में, अर्थात् विदेशी मुद्रा का कारोबार करनेवाले प्राधिकृत बैंक के पास, अनिवासी (साधारण) रुपया खाता (एनआरओ), अनिवासी (बाह्य) रुपया खाता (एनआरआई), विदेशी मुद्रा अनिवासी (बैंक) [एफसीएनआर (बी)] खाता खोल सकते हैं, धारित कर सकते हैं और बनाए रख सकते हैं।

✱ उन खातों की प्रमुख बातें इस प्रकार हैं : (तालिका देखें)

(31 दिसंबर, 2002 की स्थिति)

विवरण	**एफसीएनआर (बैं) खाता [विदेशी मुद्रा (अनिवासी) खाता]**	**एनआरई खाता [अनिवासी (बाह्य) रुपया खाता]**	**एनआरओ (अनिवासी साधारण रुपया खाता)**
1	2	3	4
कौन खाता खोल सकता है	एनआरआई और ओ सी बी	एनआरआई और ओ सी बी	भारत के बाहर रहने वाला कोई भी निवासी व्यक्ति
दो या अधिक एनआरआई के संयुक्त खाते खोलना	**अनुमत**	अनुमत	अनुमत
भारत में निवासी अन्य व्यक्ति के साथ संयुक्त खाता खोलना	अनुमत नहीं	अनुमत नहीं	अनुमत

खाते की नामित मुद्रा	पाउंड स्टर्लिंग, अमरीकी डॉलर, जपानी येन या यूरो	भारतीय रुपये	भारतीय रुपये
प्रत्यावर्तनशीलता : मूल धन की ब्याज की	मुक्त रूप से **प्रत्यावर्तनशील** मुक्त रूप से प्रत्यावर्तनशील	मुक्त रूप से प्रत्यावर्तनशील मुक्त रूप से प्रत्यावर्तनशील	**अप्रत्यावर्तनशील** मुक्त रूप से प्रत्यावर्तनशील
विदेशी मुद्रा **जोखिम**	कोई जोखिम नहीं	आईएनआर के मूल्य में **उतार चढ़ाव** से खाता धारक को जोखिम की संभावना	आईएनआर के मूल्य के उतार चढ़ाव से खाता धारक को ब्याज की रकम तक जोखिम
खातों के प्रकार	केवल मीयादी जमा	चालू, बचत, आवर्ती मीयादी जमा	चालू, बचत, आवर्ती मीयादी जमा
मीयादी जमा की अवधि	1 साल से कम नहीं और 3 साल से अधिक नहीं	जमा राशि स्वीकार करने वाले बैंक द्वारा घोषित अवधि तक	जमा राशि स्वीकार करने वाले बैंक द्वारा घोषित अवधि तक
ब्याज दर	रिज़र्व बैंक द्वारा निर्धारित सीमा के अंतर्गत, यदि कोई हो तो, ब्याज दर नियत करने के लिए बैंक स्वतंत्र हैं	ब्याज दर नियत करने के लिए बैंक स्वतंत्र हैं	ब्याज दर निर्धारित करने के लिए बैंक स्वतंत्र हैं

खाते में धारित निधियों की जमानत पर भारत में रुपया ऋण लेना

खाता धारक	अनुमत	अनुमत	अनुमत
अन्य पक्ष	अनुमत	अनुमत	अनुमत

खाते में धारित निधियों की जमानत पर भारत से बाहर विदेशी मुद्रा ऋण लेना

खाता धारक	अनुमत	अनुमत	अनुमत
अन्य पक्ष	अनुमत	अनुमत	अनुमत

टिप्पणी :

क) दिनांक 1.4.2002 को या उसके पश्चात् परिपक्व एनआरएनआर का जमा मूल्य खाताधारक के विकल्प के अनुसार एनआरई / एनआरओ खाते में जमा किया जाए।

ख) 31 मार्च, 2002 के पश्चात कोई भी नया एनआरएनआर खाता न खोला जाए।

ग) एनआरएनआर खाता 30 सितंबर, 2002 को बंद किया जाए या खाताधारक के इच्छानुसार उसकी आय एनआरओ खाते में अंतरित की जाए।

घ) खाता धारक एनआरआई खाते की परिपक्व आय बचत बैंक खाते में जमा करने या चालू खाते में जमा करने या नया एनआरआई मीयादी जमा खाता खोलने का विकल्प दे सकता है।

ङ) 31 मार्च, 2002 के पश्चात् कोई भी नया एनआरएसआर खाता

न खोला जाए। वर्तमान एनआरएसआर मीयादी जमा खाते उनकी परिपक्वता तक जारी रखे जाएं और **परिपक्वता आय** खाता धारक के एनआरओ खाते में जमा की जाए।

च) मीयादी जमा राशि के सिवाय कोई भी एनआरएसआर खाता 30 सितंबर , 2002 के पश्चात् जारी न रखा जाए। खाता बंद करने पर शेष रकम खाता धारक के एनआरओ खाते में अंतरित / जमा की जाए।

छ) मीयादी जमा राशि के सिवाय वर्तमान एनआरएसआर खाते 30 सितंबर, 2002 के पश्चात् जारी न रखे जाएं। खाताधारक के विकल्प पर वह बंद किया जाए या उसकी शेष रकम उसी तारीख को या उससे पहले उसके एनआरओ खाते में जमा की जाए।

ज) केवल वैयक्तिक नामों में ही खोले गए सभी किस्म के खातों में निवासी या अनिवासियों को नामित करने की सुविधा उपलब्ध है।

प्रत्येक खाते पर उपलब्ध कर लाभों के ब्यौरे के लिए प्रचलित आयकर नियम देखे जाएं।

भारत में खाता धारित करने हेतु अनिवासी भारतीय की परिभाषा : -

भारत के बाहर रहनेवाला व्यक्ति वह है जो

i) भारत का नागरिक है, या

ii) वह बांग्लादेश और पाकिस्तान के सिवाय अन्य देश का नागरिक है, यदि

(क) वह किसी भी समय भारत का पासपोर्टधारी रहा हो, अथवा

(ख) वह या उसके माता पिता या उसके पितामह भारतीय संविधान के या नागरिकता अधिनियम, 1955 (1955 का 57) के अनुसार भारतीय नागरिक थे या,

(ग) कोई व्यक्ति जो भारतीय नागरिक का पति / पत्नी हो अथवा उक्त उपखंड (क) या (ख) में उल्लिखित व्यक्ति हो।

समुद्रपारीय निगमित निकाय (ओसीबी) की परिभाषा इस प्रकार है :-

"कोई कंपनी , साझेदारी फर्म, सोसायटी या अन्य निगमित निकाय जिसका प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कम से कम 60 प्रतिशत स्वामित्व अनिवासी भारतीय के पास हो और जिसमें समुद्रपारीय ट्रस्ट शामिल है जिसमें अनिवासी भारतीयों द्वारा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में 60 प्रतिशत से अधिक **अप्रतिसंहरणीय** हित हो।"

* एफसीएनआर (बैं) जमा खाते में जमा राशि की जमानत पर भारत में केवल खाता धारक ही विदेशी मुद्रा ऋण ले सकते हैं।

एनआरओ निधियों का प्रत्यावर्तन

एनआरओ खाते की निधियों को निम्नलिखित के लिए प्रत्यावर्तित किया जा सकता है :-

* शिक्षा संबंधी खर्चों के लिए प्रति शैक्षणिक वर्ष 30 हज़ार अमरीकी डॉलर तक,
* विदेश में खाता धारक के इलाज़ के लिए अथवा उसके परिवार के सदस्यों के इलाज़ के लिए खर्चे हेतु 100,000 अमरीकी डॉलर तक,
* 10 वर्ष तक धारक अचल संपत्ति की बिक्री की आय को प्रतिवर्ष 100,000 अमरीकी डॉलर तक, भारतीय करों के भुगतान के अधीन भारत में स्थित बैंकों द्वारा जारी अंतरराष्ट्रीय क्रेडिट कार्ड की सीमा तक किए गए खर्चों के भुगतान के लिए।

परिसंपत्तियों का प्रेषण

* आप प्रति कैलेंडर वर्ष में उत्तराधिकार / विरासत द्वारा **अभिगृहीत** परिसंपत्तियों में से 100,000 अमरीकी डॉलर तक प्रत्यावर्तित कर सकते हैं । परंतु उस रकम पर देय करों का भुगतान करना होगा तथा इस आशय का दस्तावेज़ी प्रमाण प्रस्तुत करना होगा कि परिसंपत्ति उत्तराधिकार/विरासत में प्राप्त हुई है ।

भारत में निवेश

आप निम्नलिखित में निवेश कर सकते हैं :-

* सरकारी प्रतिभूतियों / प्रत्यावर्तन के अधिकार सहित यूनिट,
* प्रत्यावर्तन के अधिकार वाले शेयर/ डिबेंचर,
* प्रत्यावर्तन के अधिकार वाले भारतीय कंपनियों के शेयर / डिबेंचर पोर्टफोलिओ निवेश योजना के अंतर्गत स्टॉक एक्सचेंज के माध्यम से,
* भारतीय कंपनियां मुक्त रूप से गैर प्रत्यावर्तन आधार पर बिना किसी सीमा के ।

अचल संपत्ति

आप निम्नलिखित प्रकार की अचल संपत्ति अभिगृहीत कर सकते हैं

* यदि आप एनआरआई हैं तो भारत में कृषि / वृक्षा रोपण अथवा फार्म हाउस के सिवाय अचल संपत्ति,
* यदि आप भारतीय मूल के व्यक्ति (पीआईओ) हैं तो कृषि भूमि/ फार्म हाउस वृक्षा रोपण संपत्ति के सिवाय प्रत्यावर्तनीय निधियों में से भारत में अचल संपत्ति ।

आप निम्नलिखित प्रकार की आय प्रत्यावर्तित कर सकते हैं :-

* अपनी प्रत्यावर्तनीय निधियों में से भारत में अभिगृहीत अचल संपत्ति की बिना किसी समयबंदी अवधि के विक्री की आय,
* गृह निर्माण एजेंसियों / विक्रेता द्वारा वापस किया गया धन, फ्लैट / प्लॉट आबंटित न होने के कारण, आवासीय/ व्यापारीय संपत्ति की बुकिंग रद्द हो जाने के कारण आवेदन / **बयाना धन** ब्याज समेत, कर चुकौती के बाद, बशर्ते कि मूल भुगतान एनआरआई/ एफ़सीएनआर(बैं) खाते / आवक प्रेषणों में से किया गया हो ।

टिप्पणीः सभी व्यक्ति चाहे भारत में अथवा भारत से बाहर निवास करते हों, जो पाकिस्तान, बांगला देश, श्रीलंका, अफ़गानिस्तान, चीन, ईरान, नेपाल और भूटान के नागरिक हों, भारत में स्थित अचल संपत्ति अभिगृहीत करने अथवा अंतरित करने से पहले उन्हें रिज़र्व बैंक की अनुमति लेनी आवश्यक है ।

भारत लौटने पर

यदि आप भारत लौटने का निर्णय करते हैं तोः-

* यदि आपने भारत से बाहर निवास के दौरान कोई विदेशी मुद्रा, प्रतिभूति अथवा संपत्ति अभिगृहीत की हो तो आप उस संपत्ति को रख सकते हैं, उन्हें अंतरित कर सकते हैं अथवा विदेशी मुद्रा में निवेश कर सकते हैं अथवा भारत से बाहर किसी अचल संपत्ति में निवेश कर सकते हैं ।
* आप अपनी विदेशी मुद्रा परिसंपत्ति को रखने के लिए भारत में किसी प्राधिकृत व्यापारी के पास निवासी विदेशी मुद्रा (आरएफसी) खाता खोल सकते हैं, धारित कर सकते हैं, बनाए रख सकते हैं । भारत से बाहर निवास के दौरान धारित परिसंपत्तियों को भारत लौटते समय आरएफसी खाते में जमा किया जा सकता है ।आरएफसी खाते में जमा निधियां भारत से बाहर किसी निवेश पर लगाए गए प्रतिबंधों समेत विदेशी मुद्रा शेष के उपयोग से संबंधित सभी प्रतिबंधों से मुक्त हैं ।

टिप्पणी : उक्त सभी सुविधाएं सामान्य अनुमति के अंतर्गत उपलब्ध हैं अर्थात प्राधिकृत व्यापारी से विदेशी मुद्रा प्राप्त की जा सकती है और उसके लिए रिज़र्व बैंक के अनुमोदन की आवश्यकता नहीं है ।

समुद्रपारीय निवेश संबंधी नवीनतम ढील-संक्षिप्त परिचय

> अब सूचीबद्ध भारतीय कंपनियों को मान्यताप्राप्त विदेशी स्टॉक एक्सचेंज में सूचीबद्ध और भारत में मान्यता प्राप्त स्टॉक एक्सचेंज में सूचीबद्ध भारतीय कंपनी में कम से कम 10 प्रतिशत शेयर धारिता वाली विदेशी कंपनियों में निवेश की अनुमति है ।

वर्तमान में, निवासियों को संयुक्त उद्यम अथवा पूर्ण **स्वाधिकृत** अनुषंगी कंपनियाँ स्थापित करके **समुद्रपारीय** पंजीकृत कंपनियों की ईक्विटी में निवेश करने के लिए अनुमति नहीं थी । अब सूचीबद्ध भारतीय कंपनियों को मान्यताप्राप्त विदेशी स्टॉक एक्सचेंज में सूचीबद्ध और भारत में मान्यता प्राप्त स्टॉक एक्सचेंज में सूचीबद्ध भारतीय कंपनी में कम से कम 10 प्रतिशत शेयर धारिता वाली विदेशी कंपनियों में निवेश की अनुमति है (निवेश के वर्ष में 1 जनवरी को) । इस प्रकार के निवेश, नवीनतम लेखा-परीक्षित तुलन पत्र की तारीख को भारतीय कंपनी के शुद्ध मालियत के 25 प्रतिशत से अधिक न हों ।

निवासी व्यक्तियों को बिना किसी **मौद्रिक सीमा** के उक्त समुद्रपारीय कंपनियों में निवेश करने की अनुमति है । अब म्युचुअल फंडों को भी उक्त समुद्रपारीय कंपनियों की ईक्विटी में निवेश करने की, कुछ नियत शर्तों के तहत, अनुमति देने का निर्णय किया गया है ।

समग्र कैप को बढ़ाकर 1 मिलियन अमेरिकी डॉलर करने का भी निर्णय किया गया । तदनुसार, इस सुविधा को प्राप्त करने के इच्छुक म्युचुअल फंड को सेबी से आवश्यक अनुमति प्राप्त करने के पश्चात् रिज़र्व बैंक से संपर्क करना होगा ।

अनिवासी भारतीयों / भारतीय मूल के व्यक्तियों और विदेशी नागरिकों के लिए सुविधाओं का भी उदारीकरण किया गया है ।

वर्तमान में, प्राधिकृत व्यापारियों को एनआरओ खाते में अनिवासी भारतीयों/ भारतीय मूल के व्यक्तियों द्वारा रखी गई निधियों को शिक्षा के लिए प्रति शैक्षणिक वर्ष 30 हज़ार अमरीकी डॉलर तक,इलाज़ के लिए 100,000 अमरीकी डॉलर तक, 10 साल तक रखी गई अचल संपत्ति की विक्री की आय प्रति कैलेंडर वर्ष 100,000 अमरीकी डॉलर तक प्रत्यावर्तित करने की अनुमति थी । भारत से बाहर रहने वाले, सेवा निवृत्त कर्मचारियों/ भारतीय नागरिकों की विधवाओं समेत, विदेशी नागरिकों और अनिवासी भारतीयों/ भारतीय मूल के व्यक्तियों द्वारा उत्तराधिकार / विरासत में प्राप्त 100,000 अमरीकी डॉलर तक की परिसंपत्ति को प्रेषित करने की अनुमति थी । अब विभिन्न प्रयोजनों के लिए विभिन्न राशियों का निर्धारण समाप्त करने और समग्र सीमा को 1 मिलियन अमरीकी डॉलर प्रति कैलेंडर वर्ष तक बढ़ाने का निर्णय किया गया है । परंतु पाकिस्तान, बांग्ला देश, श्रीलंका,चीन, अफ़गानिस्तान, ईरान, नेपाल और भूटान के नागरिकों द्वारा परिसंपत्ति के प्रत्यावर्तन से संबंधित वर्तमान प्रतिबंध जारी रहेंगे ।

निवासी व्यक्तियों द्वारा कर्मचारी स्टॉक विकल्प (इएसओपी) योजना के अंतर्गत विदेशी प्रतिभूतियों की खरीद के लिए 20 हजार अमरीकी डॉलर की सीमा समाप्त करने का निर्णय किया गया है । तदनुसार, ईएसओपी योजना के अंतर्गत विदेशी प्रतिभूतियों के अभिग्रहण के लिए प्राधिकृत व्यापारियों द्वारा बिना किसी मौद्रिक सीमा के, कुछ शर्तों के अधीन, प्रेषण की अनुमति दी जा सकती है ।

भारतीय कंपनियाँ भविष्य की अपनी विदेशी मुद्रा की आवश्यकता को पूरा करने के लिए एडीआर/जीडीआर के माध्यम से उगाही गई निधि को विदेश में जब तक चाहें रख सकती हैं । इसके अतिरिक्त, उगाहे गए बकाया प्रत्यावर्तन या जुटाये गये विदेशी संसाधन के प्रत्यावर्तन अथवा उनके उपयोग तक भारतीय कंपनियाँ विदेशी मुद्रा निधि निवेश कर सकती हैं । **बाह्य वाणिज्यिक उधार** लेने वाली कंपनियाँ भविष्य की अपनी विदेशी मुद्रा की आवश्यकता के लिए विदेशी बैंक खाते में, कुछ शर्तों के अधीन, निधियाँ रख सकती हैं ।

जिन भारतीय कंपनियों ने समुद्रपारीय कार्यालय स्थापित किए हैं उन्हें रिज़र्व बैंक की पूर्व अनुमति से अपने कारोबार तथा कर्मचारियों के निवास प्रयोजन के लिए भारत के बाहर अचल संपत्ति अभिगृहीत करने की अनुमति दी गई है ।

प्रयुक्त शब्दावली

निदेशित अर्थव्यवस्था	Command Economy
विनियामक	Regulator
विनियंत्रण	Decontrol
अनुमत	Permitted
प्रत्यावर्तनशील	Repatriable
अप्रत्यावर्तनशील	Non-Repatriable
जोखिम	Exposure
नामित	Designated
उतार चढ़ाव	Variations
परिपक्वता आय	Maturity Proceeds
अप्रतिसंहरणीय	Irrevocable
अभिगृहीत	Acquired
बयाना धन	Earnest Money
स्वाधिकृत	Owned
समुद्रपारीय	Overseas
मौद्रिक सीमा	Monetary Ceiling
बाह्य वाणिज्यिक उधार	External Commercial Borrowings

बैंकों में सूचना प्रौद्योगिकी एवं लाभप्रदता

विद्या भूषण मल्होत्रा
पंजाब नैशनल बैंक,
एटा (उ.प्र.)

आज के बदलते आर्थिक परिवेश तथा प्रतिस्पर्धापूर्ण वातावरण में सूचना प्रौद्योगिकी का विशेष महत्व है। विश्व के बड़े एवं सर्वाधिक लाभ कमाने वाले बैंकों ने सूचना प्रौद्योगिकी को अपनाकर ही तेजी से विकास किया क्योंकि उन्होंने इसके महत्व को पहले ही पहचान लिया था। भारत वर्ष में इसकी आवश्यकता को आर्थिक उदारीकरण के दौर से ही महसूस किया जाने लगा था क्योंकि उदारीकरण से पहले बैंक मुख्य रूप से अपनी ब्याजगत आय तथा चुनिंदा अनुषंगी योजनाओं द्वारा ही लाभ कमाते थे। उनका न तो कार्य क्षेत्र विस्तृत था और न ही कार्य करने की स्वतंत्रता। न तो प्रतिस्पर्धा की कोई गुंजाइश थी और न ही नवोन्मेष का कोई अवसर। उदारीकरण के पश्चात बैंकिंग इतिहास में एक नया मोड़ आया। बैंकों ने लाभ कमाने के नये रास्ते खोजने प्रारम्भ कर दिये। जहाँ एक ओर बैंकों ने प्रतिभूति बाजार, मुद्रा बाजार, वित्तीय सेवाओं तथा उद्यम पूँजी में प्रवेश किया वहीं दूसरी ओर बैंक आवास ऋण, पारस्परिक निधि, कैपिटल मार्केट, क्रेडिट कार्ड कारोबार तथा निर्गम प्रबन्धन आदि कार्यों के लिए अपनी अनुषंगी कम्पनियाँ चला रहे हैं। अब बैंक 'परिसर बैंकिंग' के साथ-साथ 'बाजार बैंकिंग' की ओर बढ़ रहे हैं अतः इस बदलते बैंकिंग परिवेश में सूचना प्रौद्योगिकी का बहुआयामी प्रयोग बहुत आवश्यक हो गया है।

न तो प्रतिस्पर्धा की कोई गुंजाइश थी और न ही नवोन्मेष का कोई अवसर। उदारीकरण के पश्चात बैंकिंग इतिहास में एक नया मोड़ आया। बैंकों ने लाभ कमाने के नये रास्ते खोजने प्रारम्भ कर दिये।

आज ग्राहकों को दी जाने वाली सुविधाएं किसी चमत्कार से कम नहीं हैं। भारतीय बैंक संघ तथा कर्मचारी यूनियनों के बीच किया गया कम्प्यूटरीकरण समझौता इस दिशा में मील का पत्थर साबित हुआ है। कम्प्यूटर के प्रयोग के साथ सम्प्रेषण पद्धति के उपयोग में आने से नई तकनीक, जिसे हम सूचना-प्रौद्योगिकी के नाम से जानते हैं, का जन्म हुआ। सूचना तकनीक से जुड़ी सेवाओं में स्वचालित टेलर मशीन, इलेक्ट्रानिक फण्ड ट्रान्सफर, माइकर तकनीक से चेक समाशोधन, स्मार्ट कार्ड सुविधा, इलेक्ट्रानिक डाटा इण्टरचेंज, इलेक्ट्रानिक कैश, टेली बैंकिंग, होम बैंकिंग तथा वेबसाइट बैंकिंग इत्यादि प्रमुख हैं।

प्रतिस्पर्धा के इस वातावरण में एक बात और उभर कर सामने आई है कि निजी व विदेशी बैंक ग्राहकों को अत्याधुनिक सेवाएं प्रदान कर रहे हैं जिससे ग्राहकों की अपेक्षाएं बढ़ी हैं। बैंक पहले विक्रेता बाजार में थे तथा अपने नियमानुसार उत्पादों का विक्रय करते थे लेकिन अब बैंक क्रेता बाजार में हैं और ग्राहक ऐसे उत्पाद चुन रहे हैं जो उनके लिए लाभप्रद तथा सुविधाजनक हों।

बैंकों द्वारा सूचना-प्रौद्योगिकी को अपनाने के कारण कार्य कुशलता, गति, दूरी, पहुँच तथा सुविधा की दृष्टि से वित्तीय सेवाओं के स्वरूप में कई प्रकार के परिवर्तन हुए हैं। बैंक शोध द्वारा बाजार की स्थिति का अध्ययन, ग्राहक समूहों की पहचान, ग्राहकों की अपेक्षाओं तथा वस्तु स्थिति जानने के प्रयास तथा नवोन्मेष के तहत कम लागत वाले उत्पाद तैयार करने में प्रयासरत हैं। कम्प्यूटरीकरण के साथ-साथ सूचना प्रौद्योगिकी के सभी नवीनतम आयामों के प्रयोग से बैंकों की कार्यक्षमता तथा सूचना प्रवाह में तेजी से विकास हो रहा है। अब समय आ गया है कि बैंक कर्मचारी अपने ग्राहकों की पूरी तरह से पहचान करें तथा सभी ग्राहकों को एक लाइन में खड़ा न करके विशिष्ट ग्राहकों को वैयक्तिक सेवाएं प्रदान करें। प्रायः यह देखा जाता है कि किसी भी बैंक शाखा में जमा तथा ऋण राशियों में कुछ ग्राहकों का बहुत अधिक हिस्सा रहता है अतः यह आवश्यक हो गया है कि हम टेलीफोन / पानी के बिलों को स्वीकार करने, वेतन व पेन्शन भुगतान की लम्बी कतारों के साथ-साथ अपनी प्राथमिकताएं भी बनाये रखें तथा विशिष्ट ग्राहकों को उपेक्षित न करें।

कुछ वर्ष पूर्व भारतीय बैंक संघ की ओर से राष्ट्रीय बैंक प्रबन्ध संस्थान (एन आई बी एम) द्वारा देश के 250 शहरों तथा 500 गाँवों में ग्राहक सेवा से सम्बन्धित एक सर्वेक्षण किया गया था जिसमें 90,000 परिवारों तथा 10,000 संस्थाओं को कवर किया गया। इसमें मुख्य

रूप से दो बातें प्रकाश में आई । एक तो ग्राहकों के बाहरी चेकों तथा अन्य लिखतों (चेक, ड्राफ्ट व डिवीडेण्ड इत्यादि) के संग्रहण में देरी और दूसरा बैंक की विभिन्न जमाओं / ऋण योजनाओं तथा उत्पादों के सम्बन्ध में ग्राहकों को पर्याप्त जानकारी न मिल पाना । अतः बैंकों ने आक्रामक विपणन (मार्केटिंग) प्रणाली तथा आधुनिक सूचना-प्रौद्योगिकी को अपनाना प्रारम्भ कर दिया है। बैंकनेट, इण्टरनेट, ई-मेल, इलेक्ट्रॉनिक समाशोधन सेवा तथा टेलीफोन की हॉट लाइन का प्रयोग बढ़ाकर न केवल लिखत की वसूली में होने वाले विलम्ब को दूर किया जा सकता है बल्कि प्राइवेट तथा विदेशी बैंकों से प्रतिस्पर्धा भी की जा सकती है ।

आज सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में कुछ ऐसे छोटे बैंक भी हैं जिनकी शाखाओं तथा कर्मचारियों की संख्या बहुत कम है लेकिन ये बैंक कुछ वर्षों से लाभप्रदता, प्रति कर्मचारी व्यवसाय तथा आय के क्षेत्र में अपना उच्च स्थान बनाये हुए हैं जिसका मुख्य कारण है परम्परागत बैंकिंग के दायरे से बाहर आना तथा सूचना-प्रौद्योगिकी का बहुआयामी प्रयोग । अतः यह सत्य है की लाभप्रदता में वृद्धि के लिए सूचना-प्रौद्योगिकी की महत्वपूर्ण भूमिका को नकारा नहीं जा सकता । एक अनुमान के अनुसार स्वचालित टेलर मशीन के माध्यम से किये गये लेन-देनों की लागत काउन्टर पर बैठे टेलर के माध्यम किये गये लेन-देनों की लागत से 7 गुना कम होती है । जबकि टेलिफोन बैंकिंग इससे भी सस्ती है । वहीं दूसरी ओर इण्टरनेट बैंकिंग तो इन सबके अनुपात में बहुत ही सस्ती पड़ती है । अतः बैंकों में सूचना-प्रौद्योगिकी का प्रयोग सूचना में निम्न लागत का प्रवेश उपलब्ध करायेगा, उत्पादकता तथा परिचालन क्षमता में वृद्धि करेगा, लागतों को घटायेगा, लाभप्रदता को बढ़ायेगा तथा ग्राहक सेवा को और बेहतर करने में बैंकों का सहायक सिद्ध होगा ।

बैंकनेट, इण्टरनेट, ई-मेल, इलेक्ट्रॉनिक समाशोधन सेवा तथा टेलीफोन की हॉट लाइन का प्रयोग बढ़ाकर न केवल लिखत की वसूली में होने वाले विलम्ब को दूर किया जा सकता है बल्कि प्राइवेट तथा विदेशी बैंकों से प्रतिस्पर्धा भी की जा सकती है ।

आज 24 घंटे तथा साल के 365 दिन बैंकिंग का सपना भी साकार हो रहा है । कुछ बड़े शहरों में बैंकों ने सुपर बाजार, एयर पोर्ट, रेल्वे स्टेशन, पेट्रोल पम्प तथा अन्य व्यावसायिक केंद्रों पर अपनी स्वचालित टेलर मशीन स्थापित करना प्रारम्भ कर दिया है । जहाँ से बैंक ग्राहक किसी भी समय एक निश्चित धन राशि निकाल सकते हैं । भारतीय बैंक संघ का शेयर्ड पेमेन्ट 'स्वधन' जिसका परिचालन मुम्बई तक ही सीमित था अब देश के अन्य भागों में भी इसका परिचालन सम्भव हो गया है । प्राप्त आंकड़ों के अनुसार देश में कुल 4000 ए. टी. एम. हैं जिसमें 800 ए. टी. एम. स्वधन के अन्तर्गत कार्यरत हैं । ए.टी.एम. के बढ़ते प्रयोग ने न केवल बैंक में लगने वाली लम्बी कतारों को काफी हद तक कम किया है बल्कि ग्राहक आधार को भी बढ़ाया है ।

वर्तमान में भारत में प्रति 10 लाख की जनसंख्या पर मात्र 4 स्वचालित टेलर मशीनें हैं जबकि जापान में 1132, स्पेन में 968, दक्षिण कोरिया में 892 तथा कनाडा में 766 हैं । यह सम्भावना व्यक्त की जा रही है कि अगले 3 वर्षों में भारत में इनकी संख्या 4000 से बढ़ाकर 10000 कर दी जाये तथा इनके बहु उपयोगी प्रयोग को भी बढ़ावा दिया जाए ।

भारतीय रिज़र्व बैंक की ओर से की गई पहल के कारण इलेक्ट्रॉनिक समाशोधन सेवा अब लगभग 50 केन्द्रों पर उपलब्ध है जिससे बड़े शहरों में न केवल बैंकों के कार्य का बोझ काफी कम हुआ है बल्कि धोखाधड़ी के अवसर भी कम हो गये हैं । वहीं दूसरी ओर इलेक्ट्रानिक फ़ण्ड ट्रान्स्फर द्वारा अब 15 महानगरों के ग्राहक अपने धन (2 करोड़ रूपये तक) को एक शहर से दूसरे शहर तथा एक बैंक के खाते से दूसरे बैंक के खाते तक बिना जोख़िम तथा कम खर्च पर 24 घंटे के अन्दर भेज सकते हैं । भविष्य में यह सुविधा कुछ अन्य बड़े शहरों में शुरू हो जायेगी । अतः अब कम्प्यूटरीकरण के साथ-साथ सूचना-प्रौद्योगिकी के सभी नवीनतम आयामों का प्रयोग अत्यावश्यक हो गया है ।

आज बैंकों की लाभप्रदता को सबसे अधिक प्रभावित करनेवाला तथ्य गैर निष्पादित आस्तियाँ (एन.पी.ए.) हैं । ये न केवल बैंकों की लाभप्रदता पर प्रतिकूल असर डालती हैं बल्कि पूँजी पर्याप्तता, आस्ति देयता प्रबन्धन, निधियों का पुनर्निवेश तथा आय सृजन के क्षेत्र में भी इनका प्रतिकूल असर पड़ता है । मार्च 2002 में सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों की अनुत्पादक राशियाँ 56475 करोड़ रुपये थीं जब कि सभी भारतीय बैंकों की कुल अनुत्पादक राशियाँ लगभग 65000 करोड़ रुपये का आंकड़ा पार कर चुकी हैं जो बैंकों के लिए एक बहुत बड़ी चुनौती है । बैंकों का ऋण विभाग सुचारू रूप से चले इसके लिए बैंकों को 'सूचनागार' बनाने होंगे । भारतीय स्टेट बैंक, एच. डी. एफ. सी. बैंक तथा विदेशी प्रौद्योगिकी प्रदान करने वाली कम्पनियों के सहयोग से 'क्रेडिट इन्फॉर्मेशन ब्यूरो'

की स्थापना इस दिशा में महत्वपूर्ण कदम है । बैंक ऋण के लिए आवेदन करनेवाले के बारे में सही जानकारी इस ब्यूरो से प्राप्त कर सकेंगे जिससे भविष्य में अनुत्पादक राशियों पर कुछ रोक अवश्य लगेगी ।

बैंकिंग और जोख़िम को अलग नहीं किया जा सकता । बैंकों को कई प्रकार के जोखिमों का सामना करना पड़ सकता है । जैसे बाज़ार जोखिम, ब्याज दर जोखिम, चूककर्ता जोखिम, तरलता जोखिम, अग्रिम जोखिम, विनिवेश जोखिम तथा विनिमय जोखिम आदि । भारतीय परिवेश में जोखिम के निर्धारण का कोई पैमाना नहीं है फिर भी इसके लिए हमें अपने डाटा बेस को अधिक मजबूत बनाना होगा तथा जोखिम निर्धारण में प्रवीणता हासिल करनी होगी ।

आज बैंक अपना स्थापना खर्च कम करने के लिए अपनी लगातार घाटे में चल रही शाखाओं को बन्द कर रहे हैं । कारोबार में विविधता तथा विशेषीकरण को ध्यान में रखकर आये दिन विशेषीकृत बैंक शाखाएं खोल रहे हैं । बैंक व्यय में कटौती तथा कार्य प्रणाली में सुधार को ध्यान में रखकर कई बैंकों ने विशेषज्ञ परामर्श एजेन्सियों का सहारा भी लिया है जिन्होंने सूचना-प्रौद्योगिकी के बढ़ते प्रयोग को ध्यान में रखकर प्रशासनिक कार्यालयों के कुछ स्तर कम करने की सलाह दी है । कुछ बैंकों ने अपने प्रशासनिक कार्यालयों के स्तर कम कर दिये हैं और कुछ इस दिशा में अग्रसर हैं । इससे बैंकों की लाभप्रदता पर अनुकूल असर पड़ेगा ।

आज अमेरिका, ब्रिटेन तथा जर्मनी जैसे विकसित देश लगभग 300 प्रकार के बैंकिंग उत्पादक / सेवाएं प्रदान कर रहे हैं जबकि भारतीय बैंकों के उत्पादक उँगलियों पर गिने जा सकते हैं । अतः उदारीकरण के इस माहौल में बैंकों को लाभप्रदता बढ़ाने के लिए सूचना - प्रौद्योगिकी का भरपूर लाभ उठाना होगा तथा ऐसे उत्पाद तैयार करने होंगे जो नवीन, प्रतिस्पर्धात्मक तथा ग्राहक की आवश्यकताओं के अनुरूप हों ।

बैंकों को लाभप्रदता बढ़ाने के लिए जहाँ एक ओर गैर-ब्याज आय में वृद्धि करनी होगी वहीं दूसरी ओर गैर ब्याज व्यय में कमी के लिए भी प्रयत्नशील रहना पड़ेगा । टेलीफोन, फैक्स, टैलेक्स, तार, डाक व कोरियर आदि का चयन 'ए. बी. सी. विश्लेषण' के आधार पर किया जाना चाहिए । कोई भी उत्पाद / सेवा प्रारम्भ करने से पहले 'लागत-लाभ विश्लेषण' का पूरा ध्यान रखना चाहिए क्योंकि यह लाभप्रदता बनाये रखने का आवश्यक सूत्र है ।

बैंकों को लाभप्रदता बढ़ाने के लिए जहाँ एक ओर गैर-ब्याज आय में वृद्धि करनी होगी वहीं दूसरी ओर गैर ब्याज व्यय में कमी के लिए भी प्रयत्नशील रहना पड़ेगा ।

बैंकों में स्थापना व्यय कम करने तथा उच्च प्रौद्योगिकी को अपनाने के लिए पिछले वर्ष स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना लागू की थी जिसमें लगभग 10% (1 लाख) कर्मचारियों ने स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति ली । अभी भी ऐसे स्वर उठ रहे हैं कि पुनः नई आकर्षक स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना कुछ बैंकों द्वारा लाई जा रही है जिससे वे अपना मानव संसाधन और कम कर सकें । अतः हमें अब ऐसी नीतियाँ बनानी होंगी कि हम अच्छे , सुयोग्य तथा कर्मठ कर्मचारियों को जाने से रोक सकें। पिछले वर्ष बैंकिंग सेवा भर्ती बोर्ड बन्द हो जाने के कारण अब हमें 'कैम्पस नियुक्तियों' की ओर कदम बढ़ाने पड़ेंगे । वेतन नीतियों में भी परिवर्तन करना होगा तभी हम कम्प्यूटर / तकनीकी विशेषज्ञ तथा अपनी आवश्यकतानुसार सुयोग्य कर्मचारियों की नियुक्ति कर सकेंगे ।

सेवा उद्योग की सफलता में मानव संसाधन विकास भी एक महत्वपूर्ण पहलू है । आज न केवल अधिकारियों को बल्कि लिपिकों को भी मानव संसाधन विकास का प्रशिक्षण देना चाहिए । यह एक ऐसी प्रक्रिया है जो कर्मचारियों की मौजूदा कार्य कुशलता बढ़ाकर उन्हें और बड़ी जिम्मेदारियाँ संभालने, उनके विचारों में सकारात्मक परिवर्तन लाने तथा बेहतर व कुशल ढंग से अपना कार्य करने में सक्षम बनाती है । आज के बदलते बैंकिंग परिवेश में यह आवश्यक हो गया है कि प्रशिक्षण तंत्र को पुनः परिभाषित किया जाये तथा सूचना -प्रौद्योगिकी से सम्बन्धित विशेष कार्यक्रम तैयार किये जायें। बैंकरों को उच्च स्तर का प्रौद्योगिकी प्रशिक्षण देने के लिए राष्ट्रीय स्तर पर भी एक बैंकिंग प्रौद्योगिकी संस्थान की स्थापना की जानी चाहिए जो स्वायत्त संस्था हो तथा उसमें व्यवसायिक स्तर के प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाये जाने चाहिए ।

आज के आधुनिक बैंकिंग के दौर में बैंकों को उत्पाद सेवाओं, विपणन प्रणाली तथा सूचना-प्रौद्योगिकी को नये आयाम देने होंगे । कर्मचारियों के व्यक्तिगत विकास तथा उपलब्धियों को भी मान्यता देनी होगी । बैंकों को बाजार का रूख पहचानना होगा तथा उद्देश्यों से प्रेरित प्रबन्धकीय दृष्टिकोण भी अपनाना होगा जिसके दूरगामी परिणाम होंगे और बैंक भावी चुनौतियों का सामना करते हुए अपनी लाभप्रदता बढ़ा सकेंगे ।

धोखाधड़ियां - निवारण ही उपाय है

अपूर्व कुमार
वरिष्ठ प्रबंधक
बैंक ऑफ बड़ौदा प्रशिक्षण केंद्र
पटना

एक आँकड़े के अनुसार पिछले तीन वर्षों में सिर्फ सरकारी बैंकों में धोखाधड़ियों के 5007 मामले प्रकाश में आए जिनमें 1408.89 करोड़ रुपये की राशि फंसी हुई है । आज जहाँ बैंकिंग उद्योग लाभ के प्रति काफी सजग है वहीं इतनी बड़ी राशि का रिसाव एक बहुत चिन्ताजनक विषय है । जहाँ मौद्रिक लेनदेन ही व्यापार का आधार हो धोखाधड़ी का होना कोई अनहोनी या नयी घटना नहीं है लेकिन एक तथ्य तो निश्चित है कि यदि हम सतर्क हैं तो काफी हद तक इन्हें नियंत्रित किया जा सकता है । भीड़ भाड़ वाली तेज रफ्तार ट्रैफिक वाली सड़क पर चलना खतरनाक है किन्तु यदि हम बाएं से चलें, सड़क के दोनों ओर देखकर सड़क पार करें, चलने हेतु फुटपाथ का प्रयोग करें तो निश्चित ही दुर्घटना से बचा जा सकता है ।सावधानी अपने आप में एक उपाय है ।

बैंकिंग का आधार ही 'विश्वास' पर टिका है ' बेईमानी' या 'धोखाधड़ी' शब्द बैंकिंग की अवधारणा के विपरीत या विरूद्ध हैं । ईमानदारी, नैतिकता एवं गोपनीयता के अभाव में बैंकों का अस्तित्व ही संभव नहीं है ।

बैंकिंग का आधार ही 'विश्वास' पर टिका है ' बेईमानी' या 'धोखाधड़ी' शब्द बैंकिंग की **अवधारणा** के विपरीत या विरूद्ध है । ईमानदारी, नैतिकता एवं गोपनीयता के अभाव में बैंकों का अस्तित्व ही संभव नहीं है ।जब हमने जनता के निधियों का प्रबंधन करने की जिम्मेदारी ली है तो उच्चतम स्तर के नैतिक मूल्यों का प्रदर्शन अपेक्षित होता ही है ।

धोखाधड़ी किसे कहते हैं ?

सामान्य अर्थों में कपट या धोखाधड़ी ऐसे कर्म को कहते हैं जिसमें एक व्यक्ति बेईमानी करके किसी दूसरे व्यक्ति के अधिकारों को चोट पहुंचाता है और इसके फलस्वरूप वह आर्थिक लाभ प्राप्त करता है या कर सकता है ।

भारतीय संविदा अधिनियम (1872) की धारा 17 में कपट की व्याख्या की गयी है

'' जब अनुबंध के एक पक्षकार द्वारा या उसकी **मौनाकूलता** से या उसके प्रतिनिधि दूसरे पक्ष या प्रतिनिधि को धोखा देने के उद्देश्य से या प्रस्तावित अनुबंध के लिए उसकी स्वीकृति प्राप्त करने के अभिप्राय से निम्नलिखित कार्यों में से कोई कार्य करते हैं तो उसके द्वारा कपट किया हुआ माना जाता है :-

1. किसी असत्य बात का सुझाव जिसकी सच्चाई में सुझाव देने वाले को भी विश्वास नहीं है ;
2. किसी तथ्य का ज्ञान या विश्वास रखने वाले व्यक्ति द्वारा उस तथ्य को सक्रिय रूप से छुपाना
3. ऐसा वचन जिसे पूरा करने का इरादा न हो
4. धोखा देने के उद्देश्य से किया गया कोई अन्य कार्य

पिछले तीन वर्षों के दौरान हुई धोखाधड़ियों के मामले और निहित राशि

(राशि करोड़ रुपये में)

	1999-2000		2000-01		2001-02	
	मामले	राशि	मामले	राशि	मामले	राशि
सरकारी क्षेत्र के बैंक	1892	379.16	1706	553.64	1409	476.09
निजी क्षेत्र के बैंक	293	52.29	222	48.87	300	69.03
विदेशी बैंक	1213	33.52	966	96.40	326	11.31

5. कोई ऐसा कार्य या भूल जिसे विधि द्वारा कपटपूर्ण घोषित किया गया हो ।''

सामान्य धोखाधड़ी एवं बैंक धोखाधड़ी में काफ़ी अन्तर है, जहाँ सामान्य धोखाधड़ी में किसी सफल प्रयास को शामिल किया जाता है वहीं बैंक धोखाधड़ी में वे सभी प्रयास एवं कार्य शामिल हैं जो सफलतापूर्वक किये गए हों अथवा जिन्हें असफल कर दिया गया हो । इस प्रकार धोखाधड़ी के प्रयासों को भी धोखाधड़ी में शामिल किया जाता है ।

भारतीय रिज़र्व बैंक ने बैंकिंग धोखाधड़ी के सम्बन्ध में निम्नलिखित को सम्मिलित किया है :

1. मिथ्या वर्णन की घटनाएं
2. **विश्वास भंग**
3. लेखा पुस्तकों की गड़बड़ी
4. कपटपूर्वक भुगतान लेना
5. प्रतिभूतियों का अनधिकृत रूप से प्रयोग
6. कोषों का दुर्विनियोग
7. संपत्ति का परिवर्तन - बैंक में खुलवाये गये खाते की राशि किसी अन्य व्यक्ति के पक्ष में अन्तरित हो जाए ।
8. खाते में अनियमितता - बैंक के खाते में ऐसे व्यवहार जो बैंक की निर्धारित प्रक्रिया के अनुरूप नहीं होते हैं ।
9. ठगी अथवा छल
10. शेषों में कमी
11. चोरी

धोखाधड़ी की किसी भी घटना से बैंक को प्रत्यक्ष रूप से धन की हानि तो होती ही है लेकिन अप्रत्यक्ष रूप से इसके दुष्प्रभाव भी बहुत व्यापक होते ही हैं । बैंक की साख को धक्का लगता है और बैंक बिना वज़ह कानूनी प्रक्रिया में उलझ जाता है जिसमें धन, जन एवं समय सभी की बर्बादी होती है । बैंक शाखा की औद्योगिक शान्ति भंग होती है एवं इसका प्रभाव ग्राहक सेवा एवं अन्ततः व्यवसाय पर भी पड़ता है । हर कर्मचारी एक दूसरे को सन्देह की दृष्टि से देखने लगता है । कानूनी प्रक्रिया में गेहूँ के साथ घुन यानी निर्दोष एवं ईमानदार कर्मचारी भी पिस जाते हैं । यदि बैंकों में धोखाधड़ी के अधिक मामले होने लगते हैं तो देश की बैंकिंग व्यवस्था पर आक्षेप लगने लगता है और वह सन्देह के घेरे में आ जाती है ।

बैंकों में धोखाधड़ी को निम्न कारक विशेष रूप से प्रश्रय देते हैं :

गलत/ अतार्किक विचारधारा

बहुत बार कर्मचारी यह सोचते हुए कि किसी **संव्यवहार** या कार्य की प्रक्रिया काफ़ी लंबी है और इतनी लम्बी प्रक्रिया की आवश्यकता नहीं है , शार्टकट अपना लेते हैं । बैंक का हर नियम लम्बे समय के अनुभव के आधार पर विकसित हुआ है और इसमें अपने स्तर पर छेड़छाड़ करना, खतरे को आमंत्रित करने जैसा है ।

कई बार किसी कर्मचारी की धोखाधड़ी में संलिप्तता पायी जाती है और वह सोचता है कि वह कभी पकड़ा नहीं जाएगा । यह भी एक गलत विचारधारा है । विलम्ब हो सकता है, पर अपराधी तो पकड़ा ही जाता है ।

व्यक्तिगत दुर्बलता

रिपोर्टिंग के पश्चात् भी जांच प्रक्रिया काफी लम्बी चलती है जिसका लाभ अपराधियों को मिलता है और साक्ष्यों को नष्ट कर दिया जाता है ।

हर धोखाधड़ी के मूल में कोई न कोई व्यक्तिगत कमजोरी ही होती है । यह दुर्बलता रुपयों के लिए भी हो सकती है या किसी कर्मचारी की दूसरे कर्मचारी के प्रति या फिर किसी ग्राहक के प्रति । कई बार ऐसा भी देखा गया है कि किसी एक कर्मचारी या ग्राहक पर अत्यधिक विश्वास ही धोखाधड़ी का जनक सिद्ध हुआ है । ऐसी ही एक घटना में एक ग्रामीण शाखा में शाखा प्रबंधक ड्राफ्ट बुक निकालने हेतु स्वीपर (जो उसके घर पर भी काम करता था) को तिजोरी की चाबियां दे देते थे । प्रधान खजांची महोदय भी शाखा प्रबंधक की तर्ज पर अपनी चाबियां भी उसे देने लगे । इसका लाभ उसने उठाया और ड्राफ्ट की पूरी किताब (पचास पन्ने वाली ड्राफ्ट बुक) उसने गायब कर दी । जब तक इसका पता चलता, लगभग एक करोड़ का फ्रॉड हो चुका था ।

बैंकों का निर्बल प्रतिरोध

धोखाधड़ियों के मामलों में बैंकों का प्रतिरोध काफी निर्बल होता है । कई बार तो इनका निपटारा शाखा स्तर पर ही कर लिया जाता है और उच्चाधिकारियों तक इसकी रिपोर्टिंग भी नहीं होती है । रिपोर्टिंग के पश्चात् भी जांच प्रक्रिया काफी लम्बी चलती है जिसका लाभ अपराधियों को मिलता है और साक्ष्यों को नष्ट कर दिया जाता है । कर्मचारी जब ऐसे मामलों में संलिप्त होते हैं तो यह कार्य और भी सरल हो जाता है ।संलिप्तता के अनुपात में दण्ड भी कम ही मिलता है जिससे दूसरे कर्मचारियों को सबक नहीं मिलता है ।

बैंकों द्वारा निवारक उपायों के शुरूआत में शिथिलता

अभी भी कई बार देखा जाता है कि इस संदर्भ में बैंक के कर्मचारी निवारक सतर्कता को गंभीरता से नहीं लेते हैं। यह काम की अधिकता से भी हो सकता है या फिर शाखा में उचित संरक्षा / निवारक संसाधनों का अभाव - जैसे नियमों की उपेक्षा, अल्ट्रा वायलेट लैंप, एलार्म आदि। इस बात की आवश्यकता है कि सभी कर्मचारी

i बैंक की **पद्धतियों एवं प्रक्रियाओं** से पूरी तरह वाकिफ हों

ii सिर्फ वाकिफ होना ही पर्याप्त नहीं है बल्कि जहाँ तक व्यावहारिक रूप से संभव हो नियमों का पालन करें। बैंक अपनी कार्य पद्धति एवं प्रक्रिया में बदलते परिवेश के अनुरूप बदलाव लाते रहें, एवं

iii उच्च कार्यालयों द्वारा शाखा की गतिविधियों एवं कार्यकलापों की मॉनिटरिंग एवं मार्गदर्शन हो।

बैंक के लेखा-परीक्षकों ने धोखाधड़ियों का घटित होना निम्न कारणों से पाया है :-

क. बैंक की निर्धारित पद्धतियों / प्रणालियों का पालन न करना

ख. बाहरी अनैतिक तत्वों का स्टाफ के गुप्त सहयोग से कार्य करना

ग. उधार सुविधाएं, टीओडी इत्यादि मंजूर करने में ऋण प्राधिकारों का दुरूपयोग

घ. **अन्तर-शाखा लेनदेन** खातों के मिलान में विलम्ब

ङ नियंत्रण प्राधिकारियों द्वारा उचित निगरानी का अभाव

च. बहियों के मिलान में बकाया कार्य के कारण स्टाफ द्वारा बहियों में हेरफेर / परिवर्तन का विलम्ब से पता चलना

छ. समाशोधन में ऐसे मांग ड्राफ्ट का भुगतान जो कि बाद में गुम / चोरी हुए पाए गए

ज. बड़ी राशियों की जाली हस्ताक्षरों की ओबीसी वसूली की प्रविष्टिगत सूचनाओं को बिना उचित सत्यापन के रिस्पाँड करना

झ. एएलपीएम ऑपरेटरों द्वारा निष्क्रिय खातों के माध्यम से प्रविष्टियों में हेरफेर

धोखाधड़ियों से बचने हेतु लेखा-परीक्षकों का परामर्श निम्नलिखित है :

1. परिचालन क्षेत्र से संबंधित सभी निर्धारित पद्धतियों का बिना चूके अनुपालन किया जाए।
2. स्टाफ सदस्यों को नये खोले गए सभी खातों, निष्क्रिय खातों के संबंध में सतर्क रहने हेतु आगाह किया जाए और बड़ी राशियों के लेनदेनों की मॉनिटरिंग की जाए।
3. ऋण की आवश्यकताओं का मूल्यांकन एवं अनुमोदन पद्धतियों का बिना चूके अनुपालन किया जाए।
4. अंतर शाखा खातों के समाधान पर अत्यधिक बल दिया जाना चाहिए / सर्वोच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिए। साथ ही, अद्यतन सूचना प्रौद्योगिकी की उपलब्धता को देखते हुए हाऊस कीपिंग एवं बहियों के मिलान के क्षेत्र में बहुत कम बकाया रहना चाहिए।
5. नियंत्रक विवरणियों की समय पर जांच।
6. गुमशुदा मांग ड्राफ्टों का उचित रिकार्ड रखा जाना चाहिए, ताकि गुमशुदा मांगड्राफ्टों के भुगतान से बचा जा सके।
7. जावक बिल / चेक, वसूली के लिए भेजते समय डाक / कूरियर से ही भेजे जाने चाहिए, लिखत ग्राहकों को सुपुर्द नहीं किए जाने चाहिए। वसूली हेतु भेजे गए बिलों की वसूली एडवाइजों की उचित जांच करने के बाद ही उन्हें रिस्पाँड किया जाना चाहिए।

उपरोक्त दिशा - निर्देशों के अनुपालन से धोखाधड़ियों की घटनाओं को रोकने में निश्चित रूप से मदद मिलेगी। ***कहा भी गया है 'जो चौकन्ना वही सयाना' अर्थात् 'A Stitch in time saves nine'***

प्रयुक्त शब्दावली

धोखाधड़ी	Fraud
अवधारणा	Concept
मौनाकूलता	Silence
विश्वास भंग	Breach of trust
अतार्किक विचारधारा	Illogical thinking
संव्यवहार	Transaction
पद्धति एवं प्रक्रिया	Systems & Procedures
अन्तर शाखा लेनदेन	Inter branch transactions

गैर निष्पादक ऋण – वर्तमान परिपेक्ष

रवि नाथ टंडन
वरिष्ठ प्रबन्धक (प्रशिक्षण)
बैंक ऑफ बड़ौदा
प्रशिक्षण केन्द्र
एम पी नगर जोन प्रथम, भोपाल

यदि वर्तमान में भारतीय बैंकिंग उद्योग के समक्ष उपस्थित सबसे गम्भीर संकट की बात की जाए तो वह है गैर निष्पादक ऋण । बैंकिंग उद्योग में आय निर्धारण एवं आस्ति वर्गीकरण के **मानक प्रावधानों** के लागू होने के पश्चात ही भारत के बैंकिंग उद्योग की वास्तविक स्थिति सामने आयी है । इन प्रावधानों के लागू होने के पूर्व बैंक अपने ऋणों को आठ भागों में विभक्त करते थे जो कि सन्तोषजनक (हैल्थ कोड 1) से लेकर **अशोध्य ऋण** (हैल्थ कोड 8) तक थे । बैंकों को अशोध्य ऋणों के विरूद्ध ही प्रावधान करना होता था एवं प्रावधान करने के लिये कोई कड़े नियम नहीं थे । बैंकों के तुलन पत्र में पारदर्शिता का अभाव था एवं उनके ऋणों की वास्तविक स्थिति मालूम ही नहीं पड़ती थी । बैंक बिना ऋण वसूली किये ही लगातार ब्याज लगाते रहते थे एवं असामान्य रूप से बढ़ा हुआ लाभ प्रदर्शित करते रहते थे । आय निर्धारण एवं आस्ति वर्गीकरण नियमों के लागू होने के पश्चात ही बैंकों के तुलन पत्र में पारदर्शिता आयी और बैंकों की वास्तविक लाभप्रदता प्रदर्शित हुई है ।

मार्च 2002 के अंत में भारत के सभी अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों में 70,904 करोड़ रूपये के गैर निष्पादक ऋण थे जो कि कुल ऋणों का 10.4% थे । भारत में गैर निष्पादक ऋणों की स्थिति को निम्न तालिका से समझा जा सकता है :

तालिका 1

भारत में अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों के गैर निष्पादक ऋणों की स्थिति

(करोड़ रुपये में)

	31.03.1998	31.03.1999	31.03.2000	31.03.2001	31.03.2002
अनुसूचित वाणिज्यिक बैंक	50815	58772	60840	63963	70904#
सरकारी क्षेत्र के बैंक	45653	51710	53294	54774	56507
निजी क्षेत्र के बैंक - पुराने	2794	3784	3985	4484	4850
नये	392	871	946	1594	6822#
विदेशी बैंक	1976	2357	2615	3111	2726

4512 करोड़ रूपये विलयन के मिलाकर

उक्त तालिका से यह स्पष्ट है कि गैर निष्पादक ऋणों में 79.7% भाग सरकारी क्षेत्र के बैंकों का है । किन्तु क्या सबसे अधिक समस्या उन्हीं के साथ है एवं अन्य क्षेत्र के बैंक इस समस्या से मुक्त हैं ? क्या सरकारी क्षेत्र के बैंकों की कार्यपद्धति अथवा कार्यक्षमता में कमी के कारण यह समस्या उत्पन्न हुई है ? किंतु किसी भी निष्कर्ष पर पहुंचना जल्दबाजी होगी जब तक कि हम गैर निष्पादक ऋणों को बैंकों के कुल ऋणों के सापेक्ष में न देखें । यदि हम गैर निष्पादक ऋणों एवं कुल ऋणों के अनुपात को देखें तो तस्वीर अधिक स्पष्ट होगी :

तालिका 2

भारत में अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों के गैर निष्पादित ऋणों का अनुपात

	31.03.1998	31.03.1999	31.03.2000	31.03.2001	31.03.2002
निजी क्षेत्र के पुराने बैंक(23)	10.9	13.1	10.8	10.9	11.0
निजी क्षेत्र के नये बैंक(8)	3.5	6.2	4.1	5.1	8.9
विदेशी बैंक (42)	6.4	7.6	7.0	6.8	5.4
सरकारी क्षेत्र के बैंक (27)	16.0	15.9	14.0	12.4	11.1
समस्त अनुसूचित वाणिज्यिक बैंक (100)	14.4	14.7	12.8	11.4	10.4

उक्त तालिकाओं से निम्न तथ्य सामने आते हैं :-

1) समस्त अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों के गैर निष्पादक ऋण बड़ी तेजी से बढ़ रहे हैं । चार (1998 से 2002) वर्ष की अवधि में इनमें 20089 करोड़ रूपये अर्थात 39.53% की वृद्धि हुई है । (देखें तालिका 1)

> गैर निष्पादक ऋणों की समस्या बैंकों के स्वामित्व से असम्बद्ध है । सरकारी / निजी / विदेशी सभी क्षेत्र के बैंकों में गैर निष्पादक ऋणों में वृद्धि हो रही है ।

2) निजी क्षेत्र के नये बैंक भी इस समस्या से अछूते नहीं हैं एवं उनके गैर निष्पादक ऋण चार वर्ष की अवधि में 392 करोड़ रुपये से बढ़कर 2310 (विलयन के 4512 करोड़ रुपए निकालकर) करोड़ हो गये हैं जो कि 489 प्रतिशत की वृद्धि दर्शाते हैं । (देखें तालिका 1)

3) निवल राशि के रूप में सरकारी क्षेत्र के बैंकों के गैर निष्पादक ऋणों में चार वर्षों की अवधि में 10854 करोड़ रूपये अर्थात 29 प्रतिशत की वृद्धि हुई है (देखें तालिका 1) एवं इसी अवधि में सरकारी क्षेत्र के बैंकों के गैर निष्पादित ऋणों एवं कुल ऋणों का अनुपात 16 प्रतिशत से गिरकर 11.1 प्रतिशत हो गया है (देखें तालिका 2) । किन्तु यह कमी मुख्य रूप से इन बैंकों के ऋणों के बढ़ने के कारण हुई है ।

4) भारत में कार्यरत विदेशी बैंकों के गैर निष्पादित ऋणों में भी चार वर्ष की अवधि में 37.96 प्रतिशत की वृद्धि हुई है एवं ये वर्ष 1998 के 1976 करोड़ रुपये के स्तर से बढ़ कर वर्ष 2002 में 2726 करोड़ रूपये के स्तर पर पहुंच गये हैं ।(देखें तालिका 1)

5)भारत में कार्यरत समस्त अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों के गैर निष्पादित ऋणों एवं कुल ऋणों का अनुपात लगातार कम हो रहा है एवं यह वर्ष 1998 में 14.4 प्रतिशत के स्तर से गिर कर वर्ष 2002 में 10.4 प्रतिशत के स्तर पर पहुंच गया है । (देखें तालिका 2) किन्तु यह कमी मुख्य रूप से इन बैंकों के ऋणों के बढ़ने के कारण हुई है ।

उक्त तथ्यों से हम निम्न निष्कर्षों पर पहुंचते हैं :

1) गैर निष्पादक ऋणों की समस्या बैंकों के स्वामित्व से असम्बद्ध है । सरकारी / निजी / विदेशी सभी क्षेत्र के बैंकों में गैर निष्पादक ऋणों में वृद्धि हो रही है ।

2) गैर निष्पादक ऋणों की सूची में प्रत्येक वर्ष नये खाते जुड़ रहे हैं । निवल गैर निष्पादित ऋण राशि में वर्ष 1998-99 के मध्य 7957 करोड़ रुपये वर्ष 1999-2000 के मध्य 3123 करोड़ रुपये वर्ष 2000-2001 के मध्य 3123, करोड़ रुपये तथा वर्ष 2001-2002 के मध्य 6941 करोड़ रूपये की वृद्धि दर्ज की गयी है । (देखें तालिका 1)

3) उपर्युक्त 2 में दर्शायी गयी राशि गैर निष्पादित ऋणों में शुद्ध वृद्धि की है । यह वृद्धि बैंकों द्वारा वर्ष भर में वसूल की गयी राशि पर नये गैर निष्पादित ऋणों का आधिक्य है ; अर्थात

गैर निष्पादित ऋणों में शुद्ध वृद्धि इस राशि से कहीं अधिक है।

4) बैंकों एवं सरकार द्वारा विभिन्न प्रयास किये जाने के बावजूद भी बैंकों की यह समस्या नियंत्रण में नहीं आ रही है ।

5) भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा समय - समय पर लागू की गयी समझौता योजनाओं का कोई भी **सकारात्मक प्रभाव** देखने में नहीं आ रहा है ।

6) अतः यह स्पष्ट है कि समस्या का मूल कहीं और है एवं बिना उसका निदान किये गैर - निष्पादक ऋणों की समस्या का समाधान नहीं है ।

इस लेख में हम इन्हीं कारणों को जानने का प्रयास करेंगे।

यदि कोई व्यक्ति / फर्म अथवा कम्पनी बैंक के ऋणों के भुगतान में कोई चूक करती है तो बैंकों के पास चूक की राशि वसूल करने के लिये निम्न कानूनी उपाय उपलब्ध हैं :

1) वह ऋण राशि की वसूली के लिये सिविल वाद दायर कर सकता है ।

2) यदि ऋण राशि 10 लाख रूपये अथवा उससे अधिक है तब बैंक ऋण राशि की वसूली के लिये ऋण वसूली ट्रिब्यूनल (DRT) में दावा दाखिल कर सकता है ।

3) अधिकांश राज्यों में सरकार द्वारा प्रायोजित ऋण योजनाओं एवं कृषि ऋण योजनाओं के अन्तर्गत दिये गये ऋण की वसूली सरकारी देय के समान करने के कानूनी प्रावधान हैं ।

4) लोक अदालत के माध्यम से परस्पर सहमति के आधार पर ऋणों की वसूली के वाद निपटाये जा सकते हैं ।

किन्तु अधिकांश मामलों में बैंकों को इन उपायों को अपनाने के बाद भी ऋण वसूली की सुनिश्चितता नहीं रहती है । बैंकों को इसमें निम्न कठिनाइयां सामने आती हैं :

1) सिविल वाद के मामले में वाद निस्तारण का समय निश्चित नहीं है । सिविल वाद बहुधा वर्षों तक लम्बित रहते हैं एवं लंबी कानूनी प्रक्रिया के पश्चात जब बैंक को सम्बन्धित वाद में डिक्री प्राप्त होती है तो उसका **क्रियान्वयन** नहीं हो पाता है । अतः बैंकों का अनुभव सिविल वाद के माध्यम से ऋण वसूली के क्षेत्र में अच्छा नहीं है ।

2) सिविल वाद में होने वाले असामान्य विलम्ब एवं उसके कारण बैंकों की ऋण वसूली पर पड़ने वाले विपरीत प्रभाव को ध्यान में रखते हुए सरकार द्वारा वर्ष 1993-1994 में विशेष ऋण वसूली ट्रिब्यूनल की स्थापना की गयी थी । स्थापना के समय प्रस्तावित किया गया था कि ट्रिब्यूनल के समक्ष लाये गये वाद का निपटारा 6 माह की अवधि में हो जाएगा । ऋणी की सम्पत्तियों को निस्तारित करने के लिये ट्रिब्यूनल में एक वसूली अधिकारी की नियुक्ति भी की गयी जिसको इस सम्बन्ध में व्यापक अधिकार प्रदत्त किये गये थे । किन्तु यदि इन प्राधिकरणों की प्रगति को देखें तो ये सन्तोषजनक प्रतीत नहीं होती है । मार्च 2001 तक विभिन्न ऋण वसूली प्राधिकरणों में 103345 करोड़ रूपये राशि की वसूली के लिये 19462 वाद दायर किये गये थे किन्तु इस धनराशि के विरूद्ध कुल वसूली मात्र 2583 करोड़ रूपये (लगभग 2.5 प्रतिशत) ही है जिसमें बैंकों द्वारा समझौता प्रस्तावों के माध्यम से प्राप्त राशि भी शामिल है ।

3) अधिकांश राज्यों में सरकार द्वारा प्रायोजित ऋण योजनाओं एवं कृषि ऋण योजनाओं के अन्तर्गत दिये गये ऋण की वसूली सरकारी देय के समान करने के कानूनी प्रावधान हैं । किन्तु राज्य सरकारों के राजस्व विभाग बैंकों की ऋण वसूली को प्राथमिकता की सूची में सबसे अन्त में रखते हैं एवं इसके माध्यम से भी वसूली का प्रतिशत अच्छा नहीं है । वरन् बैंकों के, सरकार द्वारा प्रायोजित योजनाओं में, वसूली का प्रतिशत बहुत कम है।

जहां तक लोक अदालतों का प्रश्न है, यह वास्तव में ऋण वसूली की प्रक्रिया न होकर समझौते की प्रक्रिया है एवं बिना ऋणी की सहमति के इसके माध्यम से कोई भी वसूली संभव नहीं है ।

4) जहां तक लोक अदालतों का प्रश्न है, यह वास्तव में ऋण वसूली की प्रक्रिया न होकर समझौते की प्रक्रिया है एवं बिना ऋणी की सहमति के इसके माध्यम से कोई भी वसूली संभव नहीं है ।

अतः हम देखते हैं कि ऋण वसूली के जितने भी उपाय बैंकों के पास उपलब्ध हैं वे ऋण वसूली के लिये सक्षम नहीं हैं। बैंकों के समक्ष ऋण वसूली में निम्न समस्याएं सामने आ रही हैं :

1) कोई भी कानूनी प्रक्रिया इस प्रकार की नहीं है कि

उसको प्रारम्भ करने से ऋणी पर दबाव बनता हो ।

2) न्यायालयों में दावा दायर करते समय बैंकों को फीस का भुगतान करना होता है । यह बैंक पर दोहरी मार होती है । एक तरफ तो उसका धन ऋणी के पास फंसा होता है जब कि उसको वसूलने के लिये, जो कि निश्चित भी नहीं है, पुनः बैंक को फीस का भुगतान करना होता है ।

3) कई मामलों में (विशेषकर सरकार द्वारा प्रायोजित योजनाओं में) ऋणी का आवास स्थायी नहीं होता है एवं वसूली के समय उसका निश्चित पता भी बैंक के पास नहीं होता है । आवेदन पत्र अग्रसारित करने वाली एजेंसियों की भी इस सम्बन्ध में कोई जवाबदारी नहीं होती है ।

4) बैंक द्वारा किसी भी कानूनी प्रक्रिया को प्रारम्भ करने पर ऋणी विभिन्न स्तर के न्यायालयों की शरण में चला जाता है जहां से उसे आसानी से बैंकों के विरूद्ध स्थगन आदेश प्राप्त हो जाता है एवं ऋण वसूली की प्रक्रिया लम्बे समय के लिये टल जाती है ।

यही कारण है कि बैंकों से ऋण लेकर उसकी वापसी में लोग जान बूझ कर चूक करते हैं एवं निश्चिंत रहते हैं कि अधिक से अधिक क्या होगा?

5) बैंकों द्वारा किसी भी कानूनी प्रक्रिया के माध्यम से बैंकों को प्रभारित प्रतिभूति को बेच कर ऋण राशि की वसूली करवाना एक बहुत ही कठिन कार्य होता है । बहुधा बैंक के पास बन्धक सम्पत्ति पर अन्य व्यक्ति भी अपना दावा करने लगते हैं जिससे भी वसूली प्रक्रिया विपरीत रूप से प्रभावित होती है ।

6) किसी भी ऋण लेने वाली कंपनी के प्रवर्तकों एवं निदेशकों का बैंकों के प्रति दायित्व सीमित होता है । बहुधा कम्पनियों के प्रवर्तक एवं / अथवा निदेशक कम्पनी की सम्पत्ति का गलत रूप से प्रयोग कर लेते हैं / अपने परिजनों को हस्तांतरित कर देते हैं एवं बैंक उन पर कोई भी कार्यवाही नहीं कर पाता है ।

7) बैंकों के पास जान बूझ कर चूक करने वाले के विरूद्ध भी कोई त्वरित उपचार न होने के कारण ऐसे ऋणियों पर दबाव बनाना बहुत मुश्किल होता है एवं यह बैंकों के लिये बहुत ही चिंता की बात है ।

8) उपरोक्त कारणों से जब बैंक चूक कर्ता व्यक्तियों पर दबाव बनाने में असमर्थ होता है तो उसका गलत संदेश जाता है कि चूक की स्थिति में भी बैंक उनका कुछ नहीं कर सकते हैं । जान बूझ कर चूक करने के मामलों में इस कारण से भी बहुत वृद्धि हो रही है ।

अतः स्पष्ट है कि ऋण वसूली के लिये जो भी नियम - कानून प्रचलित हैं वे एक प्रकार से कर्ज लेकर न लौटाने वालों के लिये ही मददगार साबित होते रहे हैं । यही कारण है कि बैंकों से ऋण लेकर उसकी वापसी में लोग जान बूझ कर चूक करते हैं एवं निश्चिंत रहते हैं कि अधिक से अधिक क्या होगा? किस्तें ही तो बंधेगीं और वह भी लम्बी कानूनी लड़ाई के बाद, जिस पर बैंकों का काफी धन खर्च हो चुका होगा । इन्हीं सब कारणों से गैर निष्पादक ऋणों के मामले में ऋणी की जगह बैंक खुद ही दबाव में आ गये हैं एवं ऋणी जान बूझ कर चूक करने के बाद उन पर समझौता प्रस्ताव स्वीकार करने का दबाव बनाने का प्रयास करते हैं ।

इन समस्याओं से निपटने के लिये भारत सरकार द्वारा विभिन्न कदम उठाए जा रहे हैं । हाल ही में कानून में यह प्रावधान किया गया है कि कोई भी सिविल वाद अधिकतम एक वर्ष की अवधि में निपट जाना चाहिये । इससे बैंकों को अपने वाद शीघ्र निपटाने में आसानी होगी । साथ ही एक कानून 'वित्तीय परिसम्पत्तियों का प्रतिभूतिकरण एवं पुनर्गठन और प्रतिभूति लाभ प्रत्यावर्तन' को केन्द्रीय मंत्रीमण्डल ने भी स्वीकृति दे दी है । इस कानून के द्वारा 'परिसम्पत्ति पुनर्निर्माण कंपनी' (ए आर सी) का गठन संभव हुआ । बैंकों द्वारा इन कम्पनियों को कर्ज में फंसी राशि अथवा उससे जुड़ी परिसम्पत्तियों का हस्तांतरण किया जाएगा। अनुमानित है कि प्रस्तावित कानून में बैंकों एवं वित्तीय संस्थानों को परिसम्पत्ति पुनर्निर्माण कंपनी गठित करने, परिसम्पत्तियों का प्रतिभूतिकरण करने एवं उसके साथ - साथ गारन्टी स्वरूप रखी गयी सम्पत्ति को बिना न्यायालय के हस्तक्षेप के भुनाने का अधिकार मिल जाएगा । परिसम्पत्ति पुनर्निर्माण कंपनी इन सम्पत्तियों का अपने स्तर पर आकलन करेंगी और बदले में बैंक अथवा वित्त संस्थान को उस राशि के बाण्ड अथवा ऋण पत्र जारी करेंगी । किन्तु जैसे स्पष्टीकरण आ रहे हैं, बैंक अपने **मानक** एवं **अवमानक** ऋणों को ही 'परिसम्पत्ति

पुनर्निर्माण कंपनी' को हस्तांतरित कर पाएंगे , संदिग्ध एवं हानि परिसम्पत्तियों को नहीं । साथ ही, जैसा कि प्रस्तावित है, मार्च 2004 से कोई भी ऋण खाता मात्र 90 दिन के पश्चात ही गैर निष्पादक आस्ति के वर्ग में वर्गीकृत हो जाएगा एवं मार्च 2005 से अवमानक आस्ति 12 माह के पश्चात ही संदिग्ध आस्ति के रूप में वर्गीकृत हो जाएगी (वर्तमान में यह अवधि क्रमशः 180 दिन एवं 18 माह है) अतः यदि कोई बैंक अपने गैर निष्पादक ऋणों को सम्पत्ति पुनर्गठन कम्पनी को स्थानान्तरित करना चाहेगा तो उसे यह निर्णय शीघ्र ही लेना होगा एवं गैर निष्पादक ऋणों का एक बहुत बड़ा भाग सम्पत्ति पुनर्गठन कम्पनी के दायरे से बाहर ही रहेगा । साथ ही, ए आर सी द्वारा ऋण खाते की परिसम्पत्तियों के मूल्य का आकलन एवं उसकी वसूली भी विवाद का केन्द्र रह सकती है । यदि कोई परिसम्पत्ति ए आर सी द्वारा वसूल नहीं की जा सकेगी तो उसके सम्बन्ध में बैंक का दायित्व भी विचार का बिन्दु है ।

सुझाव

उपरोक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए यह कहा जा सकता है कि मात्र ए आर सी के गठन से ही गैर निष्पादक ऋणों की समस्या का पूर्ण निदान संभव नहीं है । वरन् इस स्थिति से निपटने के लिये कानून में अन्य परिवर्तन निम्नानुसार आवश्यक हैं :

- अचल सम्पत्ति के वैध बन्धक में लगने वाले अत्यधिक स्टाम्प शुल्क के कारण बैंक सामान्यतः साम्यिक बन्धक के माध्यम से ही प्रभार स्थापित करते हैं किन्तु, चूंकि साम्यिक बन्धक का भू अभिलेखों में कहीं भी वर्णन नहीं रहता है अतः ऋणी **कपटपूर्ण** व्यवहार से बैंक को बन्धक सम्पत्ति को अन्य लोगों को हस्तांतरित कर सकता है ।

- अतः कानून में साम्यिक बन्धक के सम्बन्ध में भू - अभिलेखों में बैंक का नाम भी ऋणी के साथ चढ़ जाना चाहिये जिससे कि बिना बैंक की सहमति के सम्पत्ति का हस्तांतरण न हो सके । इससे बहुत हद तक बन्धक सम्पत्तियों का कपट पूर्ण हस्तांतरण रूक सकेगा ।

- बैंकों के समक्ष एक बड़ी समस्या प्रभारित सम्पत्ति को बेच कर बैंक का ऋण समायोजित कराने की होती है । अतः बैंकों को प्रभारित सम्पत्ति की उगाही के लिये एक वैधानिक संस्था की स्थापना की जाए जिसे बैंकों को प्रभारित परिसम्पत्तियों (चल एवं अचल दोनों) को बिना न्यायालय के हस्तक्षेप के बेचने का अधिकार हो ।

- जिस प्रकार साख पत्र एवं गारन्टी की संविदा पर न्यायालय सामान्य रूप से स्थगन आदेश जारी नहीं करते हैं उसी प्रकार बैंकों एवं वित्तीय संस्थानों के पक्ष में बन्धक सम्पत्ति को भी न्यायालयों के हस्तक्षेप से बाहर रखा जाए ।

- यदि किसी कम्पनी के प्रवर्तक / निदेशक कम्पनी की सम्पत्ति का गलत रूप से प्रयोग कर लेते हैं / अपने परिजनों को हस्तांतरित कर देते हैं तो उस कम्पनी के प्रवर्तकों / निदेशकों के विरूद्ध सजा का प्रावधान होना चाहिये एवं उनकी व्यक्तिगत एवं निकट सम्बन्धियों की चल - अचल सम्पत्ति भी कम्पनी के प्रभारों के लिये उत्तरदायी होगी ।

- ऋणी का सत्यापन करने वाले ग्राम प्रधान आदि की ऋणी के न मिलने पर **विधिक जिम्मेदारी** हो एवं अधिकारों का दुरूपयोग होने की स्थिति में सजा का प्रावधान हो ।

प्रयुक्त शब्दावली

गैर निष्पादक	Non-productive	क्रियान्वयन	Execution
मानक प्रावधान	Standard Provisions	अवमानक	Sub-standard
अशोध्य ऋण	Bad debts	कपटपूर्ण	Fradulent
सकारात्मक प्रभाव	Positive effect	विधिक जिम्मेदारी	Legal responsibility

कृषि क्षेत्र के विकास में संस्थागत एजेंसियों का योगदान

डॉ. राजीवकुमार सिन्हा
रिसर्च एसोसिएट
भागलपुर विश्वविद्यालय
भागलपुर - 812 007 (बिहार)

पिछले कई वर्षों से 'संस्थागत वित्तीय एजेंसियाँ' (यथा- वाणिज्यिक बैंक, सहकारी संस्थाएँ एवम् क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक)- देश के सर्वांगीण आर्थिक विकास में अपना निर्णायक योगदान देती आ रही हैं । इस दिशा में सरकार के अधीन 'सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों' द्वारा अदा की गयी भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही है । यह बात सत्य है कि वित्तीय क्षेत्र के सुधारान्तर्गत बैंकिंग क्षेत्र में सुधारों की प्रक्रिया बीसवीं शताब्दी के अंतिम दशक में आरम्भ हुई । 1991 में शुरू हुए इन सुधार कार्यक्रमों का लक्ष्य था - बैंकिंग प्रणाली को 'सुदृढ़' और 'सक्षम' बनाना।

भारतीय अर्थव्यवस्था के संदर्भ में यह और भी महत्वपूर्ण हो जाता है कि परिवर्तित आर्थिक परिदृश्य में विश्व बाज़ार की चुनौतियों का सामना करते हुए राष्ट्र की अर्थव्यवस्था को इसके विभिन्न आय अर्जक, रोजगार प्रदायक तथा खाद्योत्पादन जैसे अति महत्वपूर्ण क्षेत्रों की गतिविधियों को आधार प्रदान करने वाले 'कृषि क्षेत्र' के विकास हेतु 'संस्थागत वित्तीय एजेंसियों' द्वारा कितना दृढ़तापूर्वक योगदान दिया जा रहा है । ऐसा इसलिए भी आवश्यक है, क्योंकि भारत की लगभग 64 प्रतिशत जनसंख्या अभी भी कृषि एवं उससे संबंधित सहायक गतिविधियों पर आश्रित है । यह हमारी अर्थव्यवस्था के विकासशील होने का सूचक है । साथ ही, यह भी उल्लेखनीय तथ्य है कि देश की निर्धनता रेखा से नीचे रहने वाली जनसंख्या का अधिकांश भाग ग्रामीण क्षेत्रों में ही निवास करता है । इसलिए संस्थागत एजेंसियों द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों के आर्थिक विकास हेतु दी जाने वाली वित्तीय सहायता के स्तरों को बढ़ाये जाने की विशेष अनिवार्यता है ।

कृषि ऋण-संवितरण में 'संस्थात्मक वित्त' का योगदान

गाँवों तथा शहरों के आर्थिक विकास में विद्यमान अंतर तथा देश की सम्पूर्ण शहरी एवं महानगरीय जनसंख्या को खाद्यान्नों के रूप में यथेष्ट भोजन उपलब्ध कराने की सर्वमान्य विशिष्ट क्षमता रखनेवाले विस्तृत ग्रामीण क्षेत्रों से लाखों लोगों के रोजगार की तलाश में प्रतिवर्ष शहरों / महानगरों की ओर पलायन करने की खतरनाक प्रवृत्ति को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने अनेक ऐसी ऋण प्रदान करने वाली योजनाओं की शुरूआत की है जिससे न सिर्फ ग्रामीण जनता के जीवन-स्तर को ऊँचा उठाया जा सके, बल्कि गाँवों में अधिसंरचनात्मक विकास-कार्यों के प्रोत्साहन द्वारा आर्थिक विकास सुनिश्चित करके गाँवों एवं शहरों में संतुलन भी स्थापित किया जा सके । समग्र रूप से कृषि एवं ग्रामीण विकास द्वारा लोगों की आर्थिक अवस्था में सुधार लाने के अपने अनंतिम उद्देश्यों की पूर्ति हेतु 'प्राथमिक कृषि सहकारी साख समितियाँ, 'क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक' तथा अन्य 'सार्वजनिक क्षेत्र के व्यावसायिक बैंक' कृषकों, खेतीहर मजदूरों, पशुपालकों, भूमिहीन श्रमिकों, बनियों, ग्रामीण शिल्पकारों, अनुवांशिक / पारिवारिक कौशल पर आधारित कुटीर उद्योगों द्वारा ग्रामीण जीवन में काम आने वाली विभिन्न छोटी मोटी वस्तुओं के निर्माण में संलग्न लोगों तथा महिलाओं को स्वरोजगार प्रारम्भ कराने के लिए तथा उनके आय-संवर्धन हेतु सस्ती दरों पर ऋण-सुविधाएँ मुहैय्या कराते हैं। 1969 तथा 1982 के दो चरणों में 20 'व्यावसायिक बैंकों' के राष्ट्रीयकरण तथा 1975 में 'क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों' की स्थापना के बाद तो कृषि क्षेत्र के विकास हेतु प्रदत्त साख-राशि में (1981-82 से 1990-91 की अवधि में) प्रतिवर्ष औसतन 71,422 मिलियन रुपये की वृद्धि हुई । यह राशि (1991-92 से 1998-99 की अवधि में) पूर्वापेक्षा बढ़कर 2,27,545 मिलियन रुपये प्रतिवर्ष (कृपया तालिका -1 देखिए) हो गयी ।

इस तालिका में अंकित आंकड़े यह प्रदर्शित करते हैं कि सहकारी बैंकों द्वारा कृषि और संबद्ध कार्यकलापों के लिए वर्ष 1998-99 में जहाँ 15,957 करोड़ रुपयों की राशि ऋण के रूप में उपलब्ध करवायी गयी, वहीं यह राशि लगातार बढ़ती हुई वर्ष 2001-02 में 27,080 करोड़ हो गयी तथा वर्ष 2002-03 में इसके 31,734 करोड़ रुपये हो जाने का अनुमान है ; अर्थात् आधार

तालिका - 1

कृषि और संबद्ध कार्यकलापों (1998-99 से 2002-03) के लिए आधार

स्तरीय ऋण-संवितरण के एजेंसीवार ब्यौरे

(रुपये करोड़ में)

क्र. सं.	एजेंसी / वर्ष	1998-99	1999-2000 (अनन्तिम)	2000-01 (अनुमानित)	2001-02 (अनुमानित)	2002-03 (परिकल्पित)
1.	सहकारी बैंक	15,957 (0.00)	18,429	21,909	27,080 (69.71%)	31,734 (98.87)
2.	क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक	2,460 (0.00)	3,329	3,807	4,956 (101.46%)	5,808 (136.10)
3.	वाणिज्यिक बैंक	18,443 (0.00)	22,854	27,788	31,964 (73.31%)	37,458 (103.10)
4.	जोड़	36,860 (0.00)	44,612	53,504	64,000 (73.63%)	75,000 (103.47)
	वार्षिक वृद्धि (प्रतिशत)	15	21	20	20	17

अनन्तिम, अनुमानित, 'अन्य' के अंतर्गत 'भंडारण, मार्केट यार्ड, बैल और बैलगाड़ी, बायोगैस इत्यादि से संबंधित संवितरण शामिल हैं ।

[स्रोत - ''नाबार्ड वार्षिक रिपोर्ट (2001-2002),'' पृष्ठ सं.-78] [द्रष्टव्य :- कोष्ठकों में उल्लिखित आंकड़े आधार वर्ष '1998-99' की तुलना में वृद्धि का प्रतिशत बताते हैं]

वर्ष (1998-99) की तुलना में क्रमशः 69.71 प्रतिशत तथा 98.87 प्रतिशत की वृद्धि हुई ।

उपरोक्त अवधि में वाणिज्यिक बैंकों द्वारा कृषि एवम् उससे सम्बन्धित अन्य क्रिया-कलापों के विकास हेतु प्रदत्त ऋण राशियों के आँकड़ों पर गौर करें, तो ''सहकारी बैंकों'' की तुलना में इनका योगदान कुछ बेहतर ही प्रतीत होता है । वर्ष 1998-99 में वाणिज्यिक बैंकों द्वारा कृषि-क्षेत्र में कुल 18,443 करोड़ रुपये ऋण के रूप में उपलब्ध करवाये गये । यह राशि प्रतिवर्ष बढ़ते हुए वर्ष 1999-2000 में 22,854 करोड़ रुपये, 2000-01 में 27,788 करोड़ रुपये तथा 2001-2002 में 31,964 करोड़ रुपये हो गयी थी । वर्ष 2002-03 में इन बैंकों द्वारा कृषि-कार्यों के लिए प्रदान किये जाने वाली उन ऋणों की राशि बढ़कर 37,458 करोड़ रुपये हो जाने का अनुमान है ; अर्थात आधार वर्ष (1998-99) की तुलना में अंतिम दो वर्षों में क्रमशः 73.31 प्रतिशत वृद्धि हुई तथा 103.10 प्रतिशत की वृद्धि अनुमानित है ।

'सहकारी बैंक' एवम् 'वाणिज्यिक बैंकों' की तुलना में 'क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों' द्वारा कृषि तथा उससे सम्बन्धित अन्य क्रिया-कलापों, यथा -: पशु-पालन, मुर्गी - पालन, सूअर -पालन, मत्स्य - पालन, रेशम के कीड़ों का पालन, बागवानी, कृषि आधारित ग्रामीण उद्योगों आदि के लिए उपलब्ध कराये गये ऋण - संवितरण के आँकड़ों का विश्लेषण करने पर आधार वर्ष 1998-99 की तुलना में वर्ष 2001-02 में 101.46 प्रतिशत की वृद्धि हुई तथा वर्ष 2002-03 में 136.10 प्रतिशत की सर्वाधिक उत्साहजनक वृद्धि होने का अनुमान है । परन्तु भौतिक संदर्भ में 'क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों' द्वारा प्रदत्त ऋण राशि 'सहकारी' एवं 'वाणिज्यिक बैंकों' की तुलना में अभी भी काफी कम है । वर्ष 1998-99 में कुल कृषि - ऋण की यह राशि 2,460 करोड़ रुपये थी, जो भौतिक रूप में काफी धीमी गति से बढ़ती हुई 1999-2000 में 3,329 करोड़ रुपये, 2000-01 में 3,807 करोड़ रुपये तथा वर्ष 2001-02 में 4,956 करोड़ रूपये हो गयी । वर्ष 2002-03 में उसके 5,808 करोड़ रुपये हो जाने का अनुमान है । [तालिका संख्या 1] इस प्रकार कुल कृषि - ऋण - संवितरण में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का योगदान सबसे कम है ।

समसामयिक सुधार के उपाय / निष्कर्षीय अभियुक्ति

संस्थागत एजेंसियों - यथा सहकारी बैंक क्षेत्रीय ग्रामीण

बैंक एवं वाणिज्यिक बैंक-द्वारा कृषि और संबद्ध कार्यकलापों हेतु वर्ष 1998-99 से 2002-03 के पांच वर्षों की अवधि में (अंतिम वर्ष के परिकल्पित ऋण राशि सहित) दिये जाने वाले कुल ऋण राशि की वार्षिक वृद्धि दर में अपेक्षित वृद्धि नहीं होने से (उक्त अवधि में 15 से मात्र 17 प्रतिशत होने) भारतीय कृषि क्षेत्र में वैश्वीकरण के इस युग में अपने आप को प्रति-योगितोन्मुखी बनाये रखने के लिए आवश्यक साख सुविधा की आपूर्ति नहीं हो पा रही है । अतः सरकार एवम् 'नाबार्ड' को कृषि और ग्रामीण विकास के क्षेत्र में आधार-स्तरीय ऋण प्रवाह को बढ़ाने के लिए वाणिज्य बैंकों, सहकारी बैंकों, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, अनुसूचित शहरी सहकारी बैंक तथा 'कृषि विकास वित्त कम्पनियों' की विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में कार्यरत शाखाओं को यथेष्ट परिमाण में अपेक्षाकृत निम्न ब्याज-दर पर पुनर्वित्त-सुविधा और भी उदारता से उपलब्ध कराये ।

यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को केवल ग्रामीण क्षेत्रों में ही अपनी गतिविधियों / क्रिया - कलापों का संचालन करना है । इन बैंकों के व्यवसाय का लगभग 75 से 83 प्रतिशत भाग ग्रामीण क्षेत्रों में ही होता है । फिर भी, कृषि विकास हेतु विभिन्न संस्थागत एजेंसियों द्वारा दिये जाने वाले कुल ऋण संवितरण में (अद्यतन आँकड़ों के अनुसार) 'क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों' के मात्र (लगभग 7.43 प्रतिशत) की भागीदारी न सिर्फ आश्चर्यजनक एवं दुःखद है, बल्कि देश के कृषि एवं ग्रामीण विकास के रूप में आर्थिक विकास की गति को बाधित करने वाली भी है । अतः आवश्यकता इस बात की है कि केन्द्रीय सरकार, 'भारतीय रिज़र्व बैंक' / 'नाबार्ड' एक दीर्घकालिक नीति के तहत देश के क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की सभी शाखाओं के प्रबंधकों / क्षेत्रीय प्रबंधकों को इस आशय का कड़ा निर्देश दें कि वे अपने क्षेत्रों के कृषकों, ग्रामीण काश्तकारों, शिल्पकारों, भूमिहीन, कृषि श्रमिकों तथा अन्य बेरोजगारों को न सिर्फ कृषि - कार्यों के लिए, वरन् उससे सम्बन्धित अन्य व्यवसायों को प्रारंभ करने हेतु, तथा पशु-पालन, मुर्गी-पालन, सूअर-पालन, मत्स्य-पालन, रेशम के कीड़ों का पालन, बागवानी, फसलों, फलोत्पादन, एवं कृषि - उत्पादों पर आधारित छोटे-मोटे निर्माण उद्योगों, ग्रामीण एवं कुटीर उद्योगों के लिए ऋण सुविधा की आवश्यकता महसूस करने वाले आवेदकों की योग्यता, वांछित परियोजना के प्रति उनकी अभिरूचि, संबंधित उद्यम / व्यवसाय में उनकी पारंपरिक कौशल / विशेषज्ञता तथा आवेदक के पास उपलब्ध 'घरेलू श्रम की संख्या' / प्राकृतिक एवं मानव संसाधन की उपलब्धता के आलोक में पूर्ण जानकारी प्राप्त कर अथवा प्रत्येक बैंक अपने क्षेत्रान्तर्गत पड़ने वाले सभी गावों का किसी सुस्थापित शोध - संस्थान के 'ग्रामीण अर्थशास्त्रियों' / 'अर्थशास्त्रियों' / 'कृषि अर्थशास्त्रियों' द्वारा विस्तृत सर्वेक्षण करवाकर बिना अनावश्यक विलंब किये यथेष्ट ऋण-राशि प्रदान करें । ऐसा नहीं करने वाले 'पदाधिकारियों' / 'शाखा प्रबंधकों' / 'कृषि वित्त पदाधिकारियों' को (जरूरत पड़ने पर) 'वेतन वृद्धि के लाभ से वंचित करके ' अथवा अन्य प्रकार से दंडित करने का प्रावधान भी किया जा सकता है ।

ऊपरवर्णित समयोचित उपायों द्वारा कृषि और ग्रामीण विकास के क्षेत्र में कुल 'आधार-स्तरीय ऋण प्रवाह' में 'क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों' के योगदान को काफी हद तक बढ़ाया जा सकता है । इससे कृषि विकास के साथ-साथ ग्रामीण क्षेत्रों में अतिरिक्त रोजगार के अवसरों का बड़ी संख्या में सृजन होगा । फलस्वरूप लोगों की आय में वृद्धि होगी, जिससे ग्रामीण क्षेत्रों के औसत छोटे किसानों तथा गरीबों के रहन-सहन का स्तर ऊँचा होगा। अन्ततः भारत समृद्धि के मार्ग पर अग्रसर हो जायेगा और यही समय की माँग भी है ।

संदर्भ विवरणिका (1) त्रिवेदी एस. के. तथा सेठी ए. के., "बैंक्वेस्ट (जर्नल ऑफ दि इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ बैंकर्स)", खंड-72, अंक-3, 'जुलाई सितम्बर, 2001', पृष्ठ सं. 59-68

(2) नाफडे संजय मधुकर "भारतीय अर्थव्यवस्था के समक्ष चुनौतियाँ व विकास का लक्ष्य ", "आई. बी. ए. बुलेटिन", अप्रैल, 2002 पृष्ठ - 48-51.

(3) कुमार प्रद्युम्न "कृषि ऋण तथा ग्रामीण बैंक", 'कुरूक्षेत्र' फरवरी, 2001, पृष्ठ सं. 26-27.

(4) "भारतीय आर्थिक समीक्षा (1998-99)" फरवरी, 1999 पृष्ठ संख्या - 123-125

(5) थिंगालया, एन. के. "कॉन्सोलिडेशन ऑफ दि बैंकिंग सेक्टर रिएलाईनिंग दि रूरल बैंकिंग सेक्टर", बैंक क्वेस्ट, जुलाई-सितम्बर, 2001, पृष्ठ संख्या - 23-40.

(6) "ट्रेंड एण्ड प्रोग्रेस ऑफ बैंकिंग इन इंडिया", आर.बी.आई. तथा नाबार्ड

(7) "नाबार्ड वार्षिक प्रतिवेदन (2001-2002)"

(8) डॉ. पटेल ए. आर. "रूरल क्रेडिट डेलिवरी सिस्टम : इश्यूज़ एण्ड चैलेंजस्", "कुरूक्षेत्र", नवम्बर, 2002, पृष्ठ - 4.

बैंकिंग परिदृश्य

(राशि करोड़ रुपयों में)

चयनित संकेतक *		25 जनवरी 2002	31 जनवरी 2003
1. कुल जमाराशियां	:	10,76,158	12,76,561
2. बैंक ऋण	:	5,68,824	7,04,087
3. ऋण-जमा अनुपात	:	52.86	55.15
4. नकद-जमा अनुपात	:	6.93	5.73
5. निवेश - जमा अनुपात	:	40.04	42.04

6. जनसंख्या समूह		रिपोर्ट करनेवाले कार्यालयों की संख्या	कुल योग का प्रतिशत	कुल जमाराशियां (करोड़ रुपयों में)	कुल योग का प्रतिशत	सकल बैंक ऋण (करोड़ रुपयों में)	कुल योग का प्रतिशत
ग्रामीण	सितम्बर 2001	32,538	49.11	1,47,950	14.62	59,293	10.44
	सितम्बर 2002	32,375	48.75	1,66,241	13.94	68,562	10.10
अर्धशहरी	सितम्बर 2001	14,608	22.04	1,98,631	19.63	64,318	11.32
	सितम्बर 2002	14,754	22.21	2,25,495	18.91	74,051	10.91
शहरी /	सितम्बर 2001	19,109	28.84	6,64,879	65.73	4,44,095	78.22
महानगरीय	सितम्बर 2002	19,276	29.02	8,00,631	67.14	5,35,961	78.98
योग	सितम्बर 2001	66,255	(100)	10,11,461	(100)	5,67,707	(100)
	सितम्बर 2002	66,405	(100)	11,92,369	(100)	6,78,575	(100)

*** टिप्पणी :**

(1) मद संख्या 1 से 5 में दिये गये आंकड़े 25 जनवरी 2002 और 31 जनवरी 2003 की स्थिति दर्शाते हैं । ये आंकड़े भारतीय रिज़र्व बैंक बुलेटिन के दिनांक 16 फरवरी 2002 और 15 फरवरी 2003 के "वीकली स्टेटिस्टिकल सप्लीमेंट" से लिये गये हैं तथा अनुसूचित वाणिज्य बैंकों से संबंधित हैं ।

(2) मद सं. 6 में दिये गये आंकड़े सितम्बर 2001 और सितम्बर 2002 के अंतिम शुक्रवार की स्थिति दर्शाते हैं । ये आंकड़े भी अनुसूचित वाणिज्य बैंकों से संबंधित हैं और भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा प्रकाशित, बैंकिंग सांख्यिकी से संबंधित सितम्बर 2001 और सितम्बर 2002 की तिमाही पुस्तिकाओं पर आधारित हैं ।

जमाराशियों / ऋण की मात्रा के अनुसार सर्वोच्च स्तर के पच्चीस केन्द्र
सितम्बर 2002

(राशि लाख रुपयों में)

जमाराशियाँ					ऋण				
दर्जा	केन्द्र का नाम	रिपोर्टकर्ता कार्यालयों की संख्या	राशि	वार्षिक वृद्धि (%)	दर्जा	केन्द्र का नाम	रिपोर्टकर्ता कार्यालयों की संख्या	राशि	वार्षिक वृद्धि (%)
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
1	मुंबई	1,466	184789,86	40.8	1	मुंबई	1,466	192122,64	55.6
2	दिल्ली	1,395	128376,52	15.0	2	दिल्ली	1,395	84195,10	18.0
3	कोलकाता	988	40979,47	8.9	3	चेन्नई	776	37371,90	14.6
4	बंगलूर	764	36243,06	29.4	4	कोलकाता	988	28889,59	18.2
5	चेन्नई	776	32154,14	21.0	5	बंगलूर	764	20648,24	14.9
6	हैदराबाद	538	22548,14	20.3	6	हैदराबाद	538	14532,64	5.8
7	अहमदाबाद	478	14421,67	17.5	7	अहमदाबाद	478	11963,95	23.6
8	पुणे	325	12827,71	17.8	8	चंडीगढ़	162	9899,31	16.1
9	लखनऊ	241	11565,39	18.6	9	पुणे	325	7631,17	22.3
10	चंडीगढ़	162	8121,32	9.0	10	जयपुर	241	5223,06	16.1
11	कानपुर	292	7409,13	13.5	11	वड़ोदरा	195	5150,15	12.0
12	जयपुर	241	7220,63	10.1	12	कोयम्बतूर	185	5105,48	4.8
13	वड़ोदरा	195	7052,39	9.0	13	लुधियाना	208	4543,91	10.2
14	पटना	171	6083,70	10.2	14	इन्दौर	183	3991,06	5.1
15	जलंधर	156	6079,31	13.1	15	कोच्ची	217	3773,91	5.0
16	लुधियाना	208	5909,26	13.1	16	दोराहा	5	3584,69 (121,33)	11.3
17	कोच्ची	217	5675,77	11.5	17	तिरुवनन्तपुरम	165	3018,04	7.9
18	तिरुवनन्तपुरम	165	5553,82	21.4	18	लखनऊ	241	2911,75	24.9
19	भोपाल	164	4961,25	15.8	19	श्रीनगर	92	2353,20	1.3
20	कोयम्बतूर	185	4952,99	22.6	20	विशाखापट्टनम	131	2126,44	2.8
21	इन्दौर	183	4939,40	16.9	21	कानपुर	292	2093,84	4.5
22	अमृतसर	156	4425,45	11.6	22	नागपुर	170	2032,95	12.3
23	सूरत	164	4403,00	20.8	23	भोपाल	164	1991,73	2.5
24	नागपुर	170	4377,67	7.8	24	भुवनेश्वर	113	1942,86	29.4
25	देहरादून	82	4218,26	19.7	25	तिरुपुर	50	1920,72	6.8

(स्रोत : बैंकिंग सांख्यिकी, तिमाही पुस्तिका सितम्बर 2002)

कंप्यूटर परिभाषा कोश *

Forward Slash Key - फारवर्ड स्लैश की : एक ऐसा बटन, जिस पर स्लैश (/) का चिन्ह होता है । इसके साथ-साथ कभी-कभी ? चिन्ह भी होता है.

Fourth Generation Language - चतुर्थ पीढ़ी की भाषाएं : मनुष्य की भाषा का अनुकरण कर बनायी गयी भाषाएं । ये भाषाएं सी, पास्कल, फोट्रॉन आदि से उन्नत हैं तथा RDBMS के साथ उपयोग में आती हैं । क्वेरी भाषा तथा रिपोर्टजनक इसके अच्छे उदाहरण हैं । इन्हें 4GL भी कहते हैं ।

Foxpro - फॉक्सप्रो : एक डाटाबेस प्रबंधन प्रणाली समर्थित पैकेज (भाषा), जो Dbase का सुधरा रूप है । इसमें प्रयोक्ता अनुकूल डाटा प्रविष्टि स्क्रीन बनाने, रिपोर्ट बनाने तथा उच्च स्तर की प्रलेखन संबंधी सुविधा भी उपलब्ध है तथा इसमें तीव्र गति से डाटा अभिगम किया जा सकता है तथा कुछ परिस्थितियों में यह डॉस में भी 1MB से अधिक की मेमोरी का उपयोग कर सकती है ।

Free Space - उपलब्ध मुक्त स्थान : इससे यह ज्ञात होता है कि डिस्क पर कितने बाइट उपलब्ध हैं अथवा स्मृति में अभी कितनी जगह रिक्त है ।

Frequency - आवृत्ति : किसी इलेक्ट्रॉनिक प्रक्रिया की आवृत्ति की दर, विशेषतः जितनी बार भी संकेत बदलते रहते हैं, उनकी संख्या ।

Freeware - फ्रीवेयर : सॉफ्टवेयर मुफ्त बांटने का वह तरीका जिसमें सॉफ्टवेयर का कॉपीराइट तो लेखक के पास ही रहता है । परंतु यह सॉफ्टवेयर मुफ्त बांटा जाता है तथा कोई अन्य इसका मूल्य लेकर इसे बेच नहीं सकता ।

Front End - अग्रांत, फ्रंट एंड : सॉफ्टवेयर या सॉफ्टवेयर का वह गुण, जो किसी अन्य अनुप्रयोग / प्रोग्राम के साथ उसका इंटरफेस संभव बनाता है । एक अग्रांत सामान्यतया प्रयोक्ता के लिए सुगम इंटरफेस संभव बनाता है, बनिस्पत, 'पीछे चलने वाले' अनुप्रयोग / सॉफ्टवेयर के ।

Function - फलन, फंक्शन : एक ऐसा नेमका (सबरूटीन) जो निष्पादित होकर मुख्य प्रोग्राम को एकल मान (single value) वापस करता है । 2. नेमका के लिए उपयोग होने वाला सामान्य शब्द । 3. किसी प्रोग्राम / नेमका द्वारा किया जाने वाला कार्य ।

Functional Specification - फलन संबंधी विवरण : सॉफ्टवेयर विकास का एक चरण, जिसमें उस सॉफ्टवेयर के विकास का उद्देश्य, कार्य करने की विधि, परिचालन के प्रकार आदि का विवरण होता है, अर्थात् वह किस वातावरण में किस तरह से इन्पुट लेगा या किस तरह और क्या रिपोर्ट उपलब्ध करायेगा तथा वह अन्य तत्वों से कैसे अंतः क्रिया (इंटरेक्शन) करेगा आदि।

Fuzzy Logic - धुंधला तर्क, फजी लॉजिक : कुछ सुविज्ञ प्रणालियों (expert systems) द्वारा उपयोग में लायी जाने वाली प्रणाली, जिसमें परिणाम को भिन्नात्मक सत्य के रूप में भी कहने की क्षमता हो, जो कि सत्य तथा असत्य के बीच में किसी संभावना के रूप में भी होता है, जैसे सत्य, शायद सत्य, संभावित तौर पर गलत, शायद गलत, गलत ।

Garbage - अनावश्यक सूचना, गार्बेज : 1. अनुपयोगी अथवा निरर्थक सूचना । कुछ कंप्यूटरों में गार्बेज अपने आप आ जाता है, तो कुछ अन्य कंप्यूटरों में कुछ लोग अनजाने में ही कुछ न कुछ डालते रहते हैं । 2. ऑनलाइन संचार के समय प्रदर्शित अनियमित संप्रतीक ।

General Purpose Computer - सामान्य कंप्यूटर : एक ऐसा कंप्यूटर, जो सामान्य गणना संबंधी कार्य कर सके, हालांकि

* कंप्यूटर परिभाषा कोश **(संपादक डॉ. राजेश्वर गंगवार)**, भा.रि.बैं., कें.का., बैंकिंग परिचालन और विकास विभाग, मुंबई - 400 005 द्वारा प्रकाशित कोश है। यहां पर उक्त कोश में से कतिपय चयनित शब्दों को लिया गया है।

प्रत्येक कार्य के लिए अलग-अलग सॉफ्टवेयर जरूरी होता है ।

General Purpose Language - सामान्य प्रयोजन भाषाएं : ऐसी प्रोग्रामिंग भाषायें, जिनका उपयोग अधिकतर कार्यों के प्रोग्राम लिखने में हो सके, जैसे C, BASIC, Pascal आदि । जबकि संरचित पृच्छ भाषा (SQL) केवल डाटाबेसों के साथ ही इस्तेमाल हो सकती है, अर्थात् संरचित पृच्छ भाषा सामान्य प्रयोजन की भाषा नहीं है ।

Generation - पीढ़ी : 1. भंडारित की गयीं फाइलों के विभिन्न संस्करणों को श्रेणीबद्ध करने में उपयोगी अवधारणा । जैसे सबसे पुराने संस्करण की फाईलें *ग्रांडफादर,* उसके बाद के संस्करण की फाइलें *फादर* तथा वर्तमान में चल रहे संस्करण की फाइलें *चाइल्ड* कहलाती हैं । 2. प्रक्रियाओं को श्रेणीबद्ध करने की अवधारणा, जैसे यदि कोई प्रक्रिया किसी नयी प्रक्रिया को जन्म दे, तब मूल प्रक्रिया पैरेंट कहलायेगी तथा नयी जनित प्रक्रिया चाइल्ड होगी । 3. कंप्यूटरों या प्रोग्रामिंग भाषाओं का तकनीकी उन्नति के आधार पर वर्गीकरण ।

Ghost - घोस्ट : 1. यदि पटल पर छवि के पास ही उसी छवि की एक अन्य धुंधली छवि भी दिखायी पड़े, तो वह धुंधली छवि घोस्ट कहलाती है । 2. पटल पर किसी मेनू या सबमेनू के कुछ विकल्पों को अन्य विकल्पों की तुलना में धुंधला दिखाना, ताकि उनको उस वक्त चुना न जा सके ।

GIGO (Garbage In Garbage Out) - गिगो (जैसा बोयें, वैसा काटें) : इससे यह स्पष्ट होता है कि यदि कोई अनावश्यक सूचना कंप्यूटर में डालता है तो उसी अनावश्यक सूचना को कंप्यूटर प्रदर्शित भी करता है । संक्षेप में कहें तो कंप्यूटर किसी जादुई डिबिया का नाम नहीं जो स्वयं अत्यंत महत्वपूर्ण और नवीनतम सूचनाओं का सृजन कर दे ।

Global Search And Replace - व्यापक खोज एवं स्थानापन्न / बदल : किसी प्रलेख में खोजने को दी गयी लड़ी को उसे बदलने के लिए दी गयी लड़ी से सभी स्थानों पर बदलना । यह कार्य केवल एक ही अनुदेश द्वारा संपन्न होता है तथा अत्यंत सावधानीपूर्वक करना चाहिए । हर अच्छे शब्द संसाधक में यह सुविधा रहती है ।

Global Variable - सार्वत्रिक चर, ग्लोबल वेरीयेबल : एक ऐसा चर, जिसका मान उस प्रोग्राम के किसी भी कथन द्वारा परिवर्तित किया जा सकता हो, न कि केवल उसी नेमका (रूटीन) द्वारा जहां कि उसे परिभाषित / जनित किया गया है ।

Go To - गो टू : कई क्रमादेशन (प्रोग्रामिंग) भाषाओं में क्रमादेश के लिए प्रयुक्त होनेवाला शब्द (आदेश), जिससे उस वक्त चल रही प्रक्रिया के निष्पादन को क्रमादेश के किसी दूसरे हिस्से में जाने के लिए आदेश दिया जाता है । इसे एक लेबल द्वारा पहचाना जाता है और दिये गये अनुदेशों के रूप में इसे क्रियान्वित किया जाता है ।

Graceful Exit - स्वीकृत (शिष्टतापूर्ण) निकास, ग्रेसफुल एग्ज़िट : किसी भी क्रमादेशन (प्रोग्राम) के समापन की यथोचित विधि । जब कोई क्रमादेशन बंद हो जाता है, किंतु कंप्यूटर बंद नहीं होता, तब उसका नियंत्रण परिचालन प्रणाली पर वापस आना चाहिए । सभी क्रमादेशनों को स्वीकृतिवश समापन की ओर बढ़ना चाहिए । जब हम *एग्ज़िट* का प्रयोग करते हैं और वह यदि इस प्रकार से बंद हो जाता है, तो वह स्वीकृत (शिष्टतापूर्ण) निकास होगा ।

Grammar Checker - व्याकरण जांच, ग्रामर चेकर : एक विशेष क्रमादेश (प्रोग्राम) अथवा स्वनिर्मित प्रक्रिया, जो पाठ की व्याकरण संबंधी त्रुटियों की जांच करता है, साथ ही संभावित शुद्धि का सुझाव भी देता है ।

Graph - ग्राफ : अंकीय परिमाणों, जैसे लागत, दूरी, गति आदि का चित्रमय प्रदर्शन । सामान्यतः ग्राफ, बार, लाइन, पाई अथवा छितरे स्वरूप में होता है । अधिकांश स्प्रेडशीट आंकड़ों को ग्राफ के रूप में प्रदर्शित करने में सहायक होते हैं।

Graphic Layout - ग्राफिक लेआउट : अधिकतम प्राकृतिक स्वरूप में डिज़ाइन किया गया पाठ तथा ग्राफिक ।

Graphic Character - ग्राफिक कैरेक्टर : एक ऐसा कैरेक्टर, जिसे दर्शनीय संकेत द्वारा निरूपित किया जा सके, जैसे आस्की कैरेक्टर । यह ग्राफिक्स कैरेक्टर से अलग होता है । इसे दूसरों के साथ मिलाकर सादे चित्र बनाये जा सकते हैं, जैसे पंक्तियां, बाक्स, सादा या आच्छादित (shaded) ब्लॉक ।

Graphics Mode - ग्राफिक्स मोड : कंप्यूटर पटल पर पंक्तियों / कैरेक्टरों के प्रदर्शन का वह तरीका, जिसमें उन्हें एक-एक कणिका (पिक्सेल) का उपयोग कर बनाया जाता है । यह तरीका

पटल पर चित्र बनाने में अत्यंत उपयोगी है, क्योंकि आम तौर पर पटल पर प्रदर्शन हेतु कैरेक्टर मोड (टेक्स्ट मोड) का उपयोग होता है, जिसमें कैरेक्टर एक-एक कर प्रदर्शित किये जाते हैं तथा ऐसी परिस्थिति में पटल पर अच्छे चित्रों का प्रदर्शन असंभव होता है । 2. किसी विडियो अडाप्टर से संबंधित रंग या रिजोल्युशन, जैसे कुछ वी जी ए 16 रंगों तथा 640 X 480 पिक्सल के रिजोल्युशन (resolution) के मान पटल पर दिखाते हैं ।

GUI (Graphical User Interface) - जी यू आइ : एक ऐसा वातावरण, जिसमें प्रोग्रामों, फाइलों, विकल्पों को चित्रमय आइकॅन, मेनू या संवाद बक्सों (डायलॉग बॉक्स) के रूप में पटल पर दिखाया जाता है । प्रयोक्ता माउस द्वारा इन पर क्लिक करके या की बोर्ड द्वारा तत्संबंधित प्रोग्रामों को सक्रिय कर सकते हैं । इसमें एकरूपता के लिए कुछ आइटम, जैसे स्क्रोल बार हरेक अनुप्रयोग में एक ही तरह से काम करता है तथा प्रयोक्ता की प्रतिक्रिया को भी एक ही तरह से निरूपित करता है ।

Hands-on - प्रयोगात्मक अनुभव, हैड्सऑन : इस तरह का प्रशिक्षण, जो प्रयोक्ता को कंप्यूटर को वास्तविक रूप से उपयोग करने का अवसर प्रदान करे । कर्मचारी प्रशिक्षण केंद्र कंप्यूटर संबंधी शिक्षण में इसे अवश्य शामिल करते हैं, ताकि प्रशिक्षार्थी उक्त सॉफ्टवेयर का नकली डाटा के साथ उपयोग कर जरूरी अनुभव प्राप्त कर सके ।

Handler - हैण्डलर : 1. एक नेमका (रूटीन), जो कुछ सरल कार्य जैसे डाटा भेजना, त्रुटि जांचना आदि करता है । 2. कुछ अभिलक्ष्य उन्मुख प्रोग्रामिंग भाषाओं में, जो संदेशों का समर्थन करते हैं । एक ऐसा नेमका (रुटीन), जो किसी विशेष संदेश का संसाधन विशेष अभिलक्ष्यों की *क्लास* के लिए करता है ।

Handwriting Recognition - हस्तलेख अभिज्ञान : 1. कंप्यूटर की किसी व्यक्ति के हस्ताक्षरों की जांच करके उसे पहचानने की क्षमता । 2. कंप्यूटर की हस्तलिखित डाटा की जांच करके उसे कैरेक्टर डाटा में परिवर्तन की क्षमता । यह तकनीक अभी विकास की अवस्था में है ।

Hard Coded - हार्ड कोडेड : 1. किसी विशेष स्थिति को संभालने के लिए डिजाइन किया गया प्रोग्राम । 2. प्रयोक्ता द्वारा इन्पुट में दिये गये और बदले गये मान के बजाय प्रोग्राम के कूट में ही दिये गये मान पर निर्भर होना, जैसे बैंकिंग सॉफ्टवेयर की रिपोर्टो में बैंक के नाम को प्रोग्राम में ही लिख देना, ताकि हर रिपोर्ट में वह अपने आप ही आ जाये । परंतु इस तरह के प्रोग्रामों का उपयोग किसी अन्य बैंक में नहीं किया जा सकता ।

Hash Total - हैश टोटल : एक त्रुटि, जांच मान, जिसको डाटा में से कुछ शब्द तथा अंक लेकर उनके मानों को जोड़कर प्राप्त किया जाता है तथा संसाधन के पश्चात् पुनः उसी पद्धति से पुनः वह मान प्राप्त किया जाता है । यदि मूल डाटा में कोई परिवर्तन नहीं है तो दोनों मान समान होंगे अन्यथा हम निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि संसाधन के बाद का डाटा, मूल डाटा से अलग है ।

Header - हेडर, शीर्ष पर : 1. ऐसा पाठ, जो किसी पृष्ठ संख्या के साथ आता हो तथा जिसकी प्रत्येक पृष्ठ पर पुनरावृत्ति होती हो । 2. रिपोर्ट का शीर्षक तथा उससे संबंधित सूचनाएं । 3. किसी प्रोग्राम के प्रारंभ में लिखी गयी एक या अधिक ऐसी पंक्तियां, जो पढ़नेवाले को उस प्रोग्राम के बारे में जानकारी देती हों।

Header File - हेडर फाइल : एक ऐसी फाइल, जिसका उल्लेख कुछ प्रोग्रामिंग भाषा के प्रोग्रामों में शुरू में होता है तथा इस फाइल में उस प्रोग्राम में उपयोग में आनेवाले डाटा की संरचना तथा अन्य जरूरी जानकारी रहती है । 'सी' भाषा के प्रोग्रामों में इसका अधिकतम उपयोग होता है ।

Header Record - हेडर रिकार्ड : किसी फाइल का पहला रिकार्ड। कुछ विशेष संरूप (फॉर्मेट) की फाइलों में इस रिकार्ड में फाइल संबंधी महत्वपूर्ण जानकारी लिखी होती है ।

Hidden Files - छिपी फाइल, हिडन फाइल : ऐसी फाइलें, जो सामान्यतः डायरेक्टरी की सूची में दिखलायी नहीं पड़तीं । कुछ क्रमादेशों में छिपी फाइलों का सृजन किया जाता है, ताकि महत्वपूर्ण फाइलें नष्ट न हो सकें । यदि प्रयोक्ता चाहे तो उनमें से सूचना की नकल ले सकते हैं । विंडोज 95 में भी इसका प्रावधान है ।

Hierarchical - पदानुक्रमिक : फाइलों को उनकी सूचना के अनुक्रम में डिस्क में भंडारित किया जाता है । उदाहरणार्थ सबसे ऊपर वाली फाइलों में कुछ ऐसी सूचनाएं होती है, जो केवल

मूल पाठ को आकर्षक बनाने में सहायक होती हैं, जबकि निचले स्तर पर मौजूद फाइलों में निहित सूचनाएं पूर्णतः कठिन से कठिन कार्य के निष्पादन के लिए होती हैं ।

Hierarchical Database - पदानुक्रमिक डाटाबेस : एक डाटाबेस, जिसमें रिकार्डों को इस प्रकार समूहबद्ध किया जाता है कि वे किसी पेड़ की विभिन्न शाखाओं की तरह व्यवस्थित होते हैं । इस तरह की डाटाबेस संरचना का उपयोग बहुत बड़े कंप्यूटरों पर होता है, जहां डाटा को तार्किक रूप में उत्तरोत्तर स्तरों में तोड़ा जा सकता है ।

Hierarchical File System - पदानुक्रमिक फाइल प्रणाली : फाइलों को डिस्क पर व्यवस्थित रखने की प्रणाली । इसमें फाइलों को निर्देशिकाओं (डाइरेक्ट्रीज) में रखा जाता है तथा इन निर्देशिकाओं में भी अन्य निर्देशिकायें तथा फाइलें रह सकती हैं । डिस्क की प्रमुख निर्देशिका रूट (Root) कहलाती है, जिसमें फाइलें रहती हैं तथा अन्य निर्देशिकाएं शाखाओं की तरह व्यवस्थित रहती हैं । इन निर्देशिकाओं में भी फाइलें तथा अन्य निर्देशिकाओं की उप शाखाएं होती हैं ।

Hierarchical Model - पदानुक्रम मॉडल : डाटाबेस प्रबंधन में उपयोग में आने वाला एक मॉडल । इसमें प्रत्येक रिकॉर्ड कुछ चाइल्ड रिकार्डों का पैरेंट हो सकता है तथा पैरेंट व चाइल्ड रिकार्डों की संरचना अलग-अलग भी हो सकती है, परंतु किसी रिकॉर्ड का एक से ज्यादा पैरेंट नहीं हो सकता । वैचारिक रूप से इस मॉडल को शाखाओं वाले पेड़ से निरूपित करते हैं तथा हरेक रिकॉर्ड का एक ही फाइल में होना जरूरी नहीं है ।

High Byte - उच्च बाइट : वह बाइट, जिसमें सबसे महत्वपूर्ण बिटें हों, जैसे 2 बाइट के समूह में 8 से 15 नंबर तक की बिटें, अर्थात् 16 बिटों में से आठ बिटें ।

High Density Disk - उच्च घनत्व वाली डिस्क : वह फ्लॉपी डिस्क, जिस पर ज्यादा डाटा आ सकें । जैसे 3.5'' वाली उच्च घनत्व डिस्क पर 1.44 एम बी डाटा आते हैं, जबकि 5.25'' वाली सामान्य डिस्क पर 1.2 एम बी ही आते है ।

High Level - उच्च स्तर : आधुनिक तकनीक का प्रभावी उपयोग कर अधिकतम अच्छे परिणाम देनेवाली वस्तुओं के लिए उपयोग में आनेवाला वर्णनात्मक शब्द ।

High Level Language - उच्च स्तरीय भाषा, हाइ लेवल लैंग्वेज : क्रमादेशन (प्रोग्रामिंग) की एक भाषा, जिससे आदेश अंग्रेजी की निकटतम भाषा में दिये जा सकते हैं । इसके कुछ उदाहरण बेसिक, कोबोल और पास्कल हैं । कोडांतरण (एसेम्बली) भाषा प्रायः निम्न स्तरीय भाषा के रूप में जानी जाती है ।

Highlight - विशिष्टता : पटल पर दिखायी देने वाले संप्रतीकों (कैरेक्टरों) की दिखावट को बदलना, जैसे कुछ को ज्यादा चमकीला दिखाना या प्रतिवर्ती विडियो (reverse video) में दिखाना । इस गुण का इस्तेमाल कुछ विशेष दिखाने में होता है, जैसे किसी मेनू का विकल्प, शब्द संसाधक में कोई पाठ खंड जिस पर कुछ कार्यवाही करनी है आदि ।

High Resolution - हाई रेजॅल्यूशन, अत्यधिक स्पष्टता : किसी पाठ (टेक्स्ट) या ग्राफिक को अत्यंत स्पष्ट तथा सूक्ष्म से सूक्ष्म विवरण को भी सही दिखाने की क्षमता । किसी दिये गये क्षेत्र में चित्र बनाने हेतु जितने ज्यादा पिक्सलों का इस्तेमाल होगा, चित्र उतना ही स्पष्ट बनेगा । रेजॅल्यूशन (स्पष्टता) का अर्थ क्षैतिज तथा ऊर्ध्व पंक्ति में पिक्सलों की संख्या होता है, जैसे वी जी ए एडाप्टर का रेजॅल्यूशन 640 X 480 पिक्सल होता है । मुद्रण में रेजॅल्यूशन को बिंदु प्रति इंच (DPI) के रूप में बताते हैं, जैसे किसी प्रिंटर का रेजॅल्यूशन (स्पष्टता) 600 बिंदु प्रति इंच है ।

HIPPI (High Performance Parallel Interface) - हिप्पी : सुपर कंप्यूटरों पर उपयोग में आनेवाला एक अन्सी (ANSI) प्रेषक मानक ।

Hologram - होलोग्राम : होलोग्राफी की सहायता से जनित एक त्रिआयामी चित्र, जिसे पुस्तकों, शेयरों तथा अन्य वस्तुओं पर उनकी प्रामाणिकता दिखाने के लिए लगाया जाता है । यह एक फोटोग्राफिक फिल्म पर विशेष प्रकार से बनी पतली आकृति होती है । रोशनी में इसे विभिन्न कोणों से देखने पर थोड़ी

(अगले अंक में जारी...)

पुरस्कृत निबंध

स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति समस्या या समाधान *

हेमंत शिवराम फाटक
अधिकारी,
बैंक ऑफ इंडिया, देपालपुर
जिला : इन्दौर (म.प्र.)

सन् 1951 से 1991 तक जो अर्थव्यवस्था रही उसने विदेशी तकनीक के लिये दरवाजे बंद कर रखे थे परंतु जब 1989 में उदारीकरण का दौर निम्न स्तर पर आरंभ हुआ एवं देश ने अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व बैंक से ऋण लेने का प्रयास किया तो इन संगठनों ने अपनी शर्तों के रूप में आर्थिक सुधारों की अनिवार्यता को प्रस्तुत किया। फलस्वरुप पिछले चार दशक में जारी अर्थनीति की तुलना में विपरीत अर्थनीति को स्वीकार करना पड़ा। 24 जुलाई, 1991 को अर्थनीति में महत्वपूर्ण परिवर्तन किये गये एवं देश ने **उदारीकरण**, **निजीकरण** और **वैश्वीकरण** की नीति को अपनाया जिसे संक्षिप्त नाम एल.पी.जी. दिया गया।

भारतीय अर्थव्यवस्था में भी वे ही मापदण्ड लागू किये गये जो अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रचलित थे फलस्वरुप पहले पांच वर्षों में लेखांकन पद्धति संबंधी मापदण्ड लागू किये गये जिसकी परिणति स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना के रूप में हमारे सामने है।

स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति - संक्षिप्त परिचय

पिछली दो सहस्राब्दियों में मानव जाति को मात्र एक मालिक की सेवा करनी पड़ती थी पहले दास के रूप में, बाद में नौकर के रूप में, परंतु बैंकिंग उद्योग को इस सहस्त्राब्दि में दो मालिकों की सेवा करनी पड़ रही है प्रथम - ग्राहक, दूसरा - लाभ। संभव है निकट भविष्य में मात्र लाभ की ही सेवा करनी पड़े।

वित्तमंत्री द्वारा 2001-2002 के केंद्रीय बजट में अगले पांच साल में 10 % स्टाफ को कम करने की घोषणा स्थापना व्ययों को ध्यान में रखकर की गई। परंतु विश्लेषणात्मक रुप से देखा जाये तो प्रतिवर्ष 2% की कटौती से कुल राजस्व व्यय का केवल 0.08% खर्च ही बच पायेगा और पूरे पांच वर्षों में ऐसे समस्त व्ययों की बचत 0.4% मात्र होगी। इतनी छोटी बचत के लिये रोजगार घटाने के बजाय बचत के अन्य सरल रास्ते ढूंढे जा सकते हैं।

स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति - एक विश्लेषण

सर्वेक्षण के अनुसार स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति का सांख्यिकी आकार निम्न है -

(अ) 40 से 55 वर्ष की आयु के अधिकारियों में से 75% ने स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति का स्वागत किया, इनमें 24% वे अधिकारी थे जिनकी उम्र 40 से 50 वर्ष है।

(ब) 49% अधिकारियों की उम्र 51 से 55 थी।

(स) 56 से 60 वर्ष के 26% अधिकारियों ने इसका स्वागत किया।

उम्र व वरिष्ठता के अनुसार इनमें से अधिकांश अधिकारी मध्यम ग्रेड के हैं, जो बैंकों के दैनिक कामकाज का संचालन करते हैं, यानि ग्राहक सेवा का आधार है। इन अधिकारियों ने सुरक्षित व अच्छे भत्ते, वेतन सुविधाओं की नौकरी को नकारते हुए प्रौढ़ावस्था में बेरोजगारी को क्यों चुना। प्रत्युत्तर में निम्न कारण दर्शाये गये :-

1. उदारीकरण के कारण खुली बैंकिंग स्पर्धा में भारतीय बैंकों का भविष्य उज्ज्वल नहीं है।
2. स्वैच्छिक सेवा निवृत्ति 2001 के तहत आकर्षक पैकेज दिये जा रहे हैं, भविष्य में इतने आकर्षक पैकेज नहीं मिलेंगे।
3. निकट भविष्य में सेवानिवृत्ति की आयु घटकर 58 हो जाने का भय।
4. बैंकों की स्थानांतरण नीति, जिसके तहत एक अधिकारी

*भा.रि. बैं. द्वारा सरकारी क्षेत्र के बैंकों के लिए अंतर-बैंक निबंध प्रतियोगिता, वर्ष 2001-02 में क्षेत्र 'ख' में प्रथम पुरस्कार प्राप्त निबंध। पत्रिका के स्वरूप को देखते हुए लेख को संक्षिप्त किया गया है।

को 3 से 5 साल में स्थानांतरित होना जिसमें पारिवारिक स्थिति का बाधक होना ।

5. 33% अधिकारियों ने स्वास्थ्य खराब होने के कारण समय पूर्व नौकरी छोड़ने की योजना का स्वागत किया ।
6. 32% अधिकारियों ने कार्यकारी माहौल के खिलाफ असंतोष व्यक्त किया ।
7. 17% अधिकारियों ने कार्य की जोखिम व अनुशासनात्मक कार्रवाई के डर से स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति का समर्थन किया।

स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति की परिभाषा

मूलतः स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति एक विनिमय प्रस्ताव अर्थात एक्सचेंज ऑफर है, जिसमें शेष सेवाओं का विनिमय आर्थिक प्रलोभन द्वारा किया जा रहा है, यह भी सामान्य सी बात है कि विनिमय का प्रस्ताव वही देगा जिसको भविष्य में अधिक लाभ प्राप्त होने की संभावना हो ।

"स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति एक एंटीबायोटिक है जिसके साइड इफेक्ट होना स्वाभाविक है ।"

स्वतंत्रता की आधी सदी व्यतीत होने के पश्चात भी हम वित्तीय संस्थाओं का सहयोग समझने में पूर्ण असमर्थ हैं, जबकि हम जानते हैं कि इस देश की 70% जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्र में रहती है जहाँ निजी बैंक अपनी सेवा देने में हिचकिचाहट प्रस्तुत करेंगे ।

स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति ने निम्न समस्याओं को जन्म दिया है -

1. पलायनवादी संस्कृति को प्रोत्साहन

स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति ने बैंक कर्मियों में पलायन संस्कृति की समस्या को जन्म दिया है । स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति के बहाने करीब 1.25 लाख बैंक कर्मी पलायन कर गये । बैंक कर्मियों के मन में बार-बार यह विचार आ रहा था कि उदारीकरण के कारण खुली बैंकिंग प्रतिस्पर्धा में राष्ट्रीयकृत बैंकों का भविष्य उज्ज्वल नहीं है, स्वैच्छिक सेवा निवृत्ति 2001 के तहत आकर्षक पैकेज दिये जा रहे हैं । इसके बाद इतने आकर्षक पैकेज नहीं मिलेंगे । यदि निकट भविष्य में सेवानिवृत्ति की आयु 60 वर्ष के बदले 58 वर्ष हो गई तो कुछ वर्षों में बैंक कर्मी नौकरी छोड़ने को बाध्य हो जायेंगे ।

यद्यपि पलायन के मुख्य कारण आर्थिक प्रलोभन तो थे ही परंतु कार्यकारी माहौल एवं जवाबदेयता के डर से भी पलायनवादी संस्कृति को बल मिला । पलायन के फलस्वरूप प्रशिक्षित, प्रतिभाशाली कार्य में माहिर मानव संसाधन की हानि उठानी पड़ी जो कि दोहरा आर्थिक आघात है ।

2. निजीकरण

स्वैच्छिक सेवा निवृत्ति निजीकरण की पहली सीढ़ी है, जिस पर चढ़कर अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाएं गरीबी रेखा से नीचे जीवन-यापन करने वाले आम आदमी को भविष्य में प्राप्त होने वाली आर्थिक सुविधाओं में गतिरोधक का कार्य करेंगी । क्योंकि जिस देश में राष्ट्रीयकृत बैंकों का इतना विस्तृत कार्यक्षेत्र हो एवं कर्मचारी अपने कर्तव्यों का पालन पूर्ण गंभीरता एवं जिम्मेदारी से कर रहे हों, वहां निजी क्षेत्र के मानदेय प्राप्त करने वाले कर्मचारियों से गरीबोत्थान एवं ग्रामीण विकास हेतु कार्य करने की अपेक्षा करना पूर्णतया अनुचित है।

यह दुर्भाग्यपूर्ण ऐतिहासिक तथ्य है कि स्वतंत्रता की आधी सदी व्यतीत होने के पश्चात भी हम वित्तीय संस्थाओं का सहयोग समझने में पूर्ण असमर्थ हैं, जबकि हम जानते हैं कि इस देश की 70% जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्र में रहती है जहाँ निजी बैंक अपनी सेवा देने में हिचकिचाहट प्रस्तुत करेंगे ।

स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति एवं निजीकरण के सारगर्भित संबंधों की स्पष्टता शेक्सपियर के इस कथन से स्वतः स्पष्ट है कि - "दर्शक यह नहीं जानते हैं कि पर्दे के पीछे और नाटक के बीच क्या घटित हो रहा है ।"

3. बैंकों की चरमराती कार्यप्रणाली की समस्या

स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना ने बैंकों की कार्यप्रणाली पर सीधा प्रहार किया है, राष्ट्रीयकृत बैंकों को असफल सिद्ध करना यद्यपि उसके संघर्ष का एक अंग है, परंतु बार-बार बैंकिंग कार्यप्रणाली की क्षमता पर प्रश्नचिन्ह का अर्थ है, हार और मात्र हार । यह भी कटु सत्य है कि हारा हुआ व्यक्ति विद्रोह करता है ।

तकनीकी सैलाब ने अपेक्षा बढ़ा दी है, जबकि बैंकिंग की मूलभूत असुविधाओं एवं प्राकृतिक विपदाओं का अंबार है । आज बैंक कर्मी तनावग्रस्त है, निराश है, उलझा है, और राह से विचलित होने की कगार पर है, परंतु वह कब तक किसी कारक तत्व, परिस्थिति एवं प्रणाली को कोसता रहेगा ।

4. आर्थिक समस्या

सन् 1990 के पूर्व का कृत्रिम मुनाफा ही आज बैंकिंग उद्योग का मुख्य सिरदर्द है, 60000 करोड़ रुपये की अनर्जक आस्तियों का बड़ा हिस्सा राष्ट्रीयकरण की देन है। वास्तव में बैंक इस स्थिति में नहीं हैं कि स्वैच्छिक सेवा निवृत्ति योजना का बोझ सह सकें, स्वैच्छिक सेवा निवृत्ति योजना के पहले दौर में 10,300 करोड़ रुपये खर्च हुए थे जिनमें से 3700 करोड़ रुपये ही बैंक अपने खाते में दर्शा पाए। बैंकों ने अपने कर्मचारियों के प्रशिक्षण पर काफी व्यय किया उनमें से कई कर्मचारियों ने योजना का लाभ ले लिया।

5. मूल उद्देश्य से भिन्न

यह स्पष्ट है कि स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना लागू करते समय इसके पक्ष-विपक्ष पर पर्याप्त विचार नहीं किया गया, बल्कि लक्ष्य प्राप्त करने के उद्देश्य से स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना लागू की गई। विचारणीय तथ्य है कि यदि आवश्यकता से अधिक लगे हुए लोगों को स्वैच्छिक सेवा निवृत्ति योजना का लाभ दिया जाता है तो तब ठीक है परंतु लक्ष्य पूरा करने के उद्देश्य से दिया गया लाभ कामकाज पर विपरीत प्रभाव डालेगा।

6. सेवा क्षेत्र पर आघात

भारतीय अर्थव्यवस्था जो कृषि प्रधान कही जाती थी, वर्तमान में सेवा प्रधान अर्थव्यवस्था बन गई। सन् 1999-2001 के आंकड़ों के अनुसार भारतीय अर्थव्यवस्था में सेवा क्षेत्र का योगदान 52.4%, कृषि क्षेत्र का 25.4% एवं उद्योग क्षेत्र का 22.1% रहा।

बैंक के जन-सुविधा वाले काउंटर जो आयकर, बिक्री कर, संपदा शुल्क, बिजली तथा टेलीफोन बिल जमा करने की सुविधायें प्रदान करते हैं, वे स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना के बाद प्रभावित हुए हैं।

7. प्रतिस्पर्धा

स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना के बहाने करीब 1.25 लाख बैंककर्मी पलायन कर गये, इनमें कई प्रशिक्षित और अनुभवी कर्मचारी, जो विभिन्न बैंकिंग मामलों के विशेषज्ञ थे, बैंक से विदा हो गये जिनसे प्रतिस्पर्धा प्रभावित हुई जिससे बैंक स्वयं और सारा देश चिंतित है।

सार्वजनिक क्षेत्रों के बैंकों का स्टाफ कितना निपुण था, इसका ज्वलंत उदाहरण व प्रमाण यह है कि स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना का लाभ ले चुके कई बैंक कर्मी ही आज निजी क्षेत्रों के कथित सफल बैंकों का संचालन कर रहे हैं, एवं इस कहावत को चरितार्थ कर रहे हैं कि ''घर का भेदी लंका ढावे''।

8. तकनीकी एवं साइबर क्राइम की समस्या

अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय मापदण्डों ने बैंकिंग उद्योग के मूल मंत्र सेवा को भुला दिया। सेवा के माध्यम के रूप में कम्प्यूटरीकरण को प्राथमिकता प्रदान की गई, जिसके संचालन का दायित्व उन्हीं कर्मचारियों पर था जिन्हें मितव्ययिता एवं स्थापना व्ययों में कमी करने के उद्देश्य से आर्थिक तोहफे, प्रलोभन देकर स्वैच्छिक सेवा निवृत्ति योजना के द्वारा भ्रमित किया गया और उनके स्थान पर कम्प्यूटर लगाया गया जिन्होंने सायबर क्राइम की आशंका को जन्म दिया।

यद्यपि वर्तमान में भारत में इंडियन एवीडेंस एक्ट-1872, बैंकर्स बुक एवीडेंस एक्ट-1891 और आर.बी.आई एक्ट 1934, कंपनी एक्ट आदि सुव्यवस्थित कानून व्यवस्था है परंतु ये सभी सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, पद्धतियों को ध्यान में रखकर बनाये गये थे। कम्प्यूटर आदि को देखते हुए ये कानून अपर्याप्त प्रतीत होते हैं, साइबर अपराध वर्तमान कानून की सीमा में न तो पूरी तरह से और न ही आंशिक तौर पर आते हैं।

9. विश्वसनीयता पर संदेह

स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना को लागू करने हेतु मात्र **मितव्ययिता** का पक्ष लेते हुए उसके एवज में आर्थिक प्रलोभन के रूप में भारी व्यय होना सामान्य ग्राहक को बैंकिंग उद्योग की विश्वसनीयता और उसके भविष्य के प्रति संदेह उत्पन्न करता है; बैंकिंग उद्योग में बहुत से ग्राहक मानसिक रूप से और बौद्धिक क्षमता के इतने धनी नहीं हैं कि वे उदारीकरण और अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय मापदण्डों को भलीभांति समझ सकें। उनकी नजर में बैंक कर्मी की संख्या कम होने का अर्थ मात्र आर्थिक स्थिति खराब होना है।

10. शाखा की संख्या में कमी

स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना को क्रियान्वित करने के पश्चात, बैंक कर्मियों की संख्या में कमी और व्यवसाय की प्रतिस्पर्धा एवं

लाभप्रदता के समन्वय के फलस्वरुप भविष्य में हानिप्रद शाखाओं व अन्य व्यावसायिक संभावनाओं के आधार पर शाखाओं को बंद किया जाना भी प्रस्तावित है ।

भारतीय स्टेट बैंक द्वारा भविष्य में 400 शाखाओं को बंद करना प्रस्तावित है ।स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना के क्रियान्वयन के पश्चात् उत्पन्न समस्याओं के रूप में यह एक ज्वलंत उदाहरण है ।

11. मानव संसाधन की हानि

स्वैच्छिक सेवा निवृत्ति योजना के फलस्वरूप कर्मचारियों के पलायन से राष्ट्रीयकृत बैंकों को मानव संसाधान की हानि उठानी पड़ी, वहीं निजी बैंकों का व्यासायिक व आधारभूत ढाँचा इन्हीं कर्मचारियों पर टिका हुआ है, निजी बैंकों को निपुण, पूर्व प्रशिक्षित एवं सस्ते मानव संसाधन प्राप्त हुए जिसका प्रतिकूल प्रभाव बैंक व्यवस्था पर पड़ा । कर्मचारियों की संख्या घट गई जिससे ग्राहक सेवा प्रभावित हुई एवं दैनिक कार्यों का निरीक्षण थम सा गया है । बैंक के पूँजीगत संसाधन भी घटे । बैंकों ने प्रशिक्षण के माध्यम से भारी व्यय कर कर्मचारियों का विकास किया । इस दृष्टि से प्रतिभा और इस योग्यता से प्राप्त लाभ पर भी उनका हिस्सा होना चाहिये था वो निजी संस्थाओं में चला गया जो दोहरा आघात है ।

स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति एक समाधान है

स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना के द्वारा जहाँ बैंकिंग उद्योग समस्याओं से प्रभावित हुआ वहीं दूसरी ओर विभिन्न समाधानों से लाभान्वित भी हुआ है । जो निम्न हैं :-

(1) सकारात्मक सोच

बैंकों की कार्यप्रणाली में दीमक सी लग गयी थी, साथ ही उस समय के बैंक कर्मियों ने सरकारी कार्यालय सा सोच बनाया, बाहर से राजनेता तो अंदर से बैंककर्मी बैंक को डुबोने में लग गये । बैंकों में मुनाफा अर्जन व उत्पादकता गौण हो गयी थी ।

स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना ने शेष रहे कर्मियों को यह सोचने पर बाध्य कर दिया कि पलायन एक अभिशाप नहीं अपितु व्यक्तिगत अपराध है, इस अपराध के दण्ड विभिन्न हैं, व्यक्ति स्वयं को दंडित करता है, उसे जीवनपर्यंत नहीं पता रहता कि उसने क्या खोया क्या पाया । चूंकि बौद्धिक क्षमता को पहचाने बिना कार्य करने वाले की एक ही नियति है और वह है 'आत्म ग्लानि' ।

(2) तकनीकीकरण का कोई पर्याय नहीं

कंप्यूटरीकरण के बाद भारी मात्रा में अतिरिक्त स्टाफ था । इसमें अनुत्पादक स्टाफ भी था, जिनके स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना का लाभ लेने के पश्चात भारी व्यस्तता के बाद भी वार्षिक लेखाबंदी समय पर संपन्न हुई जिसका मुख्य श्रेय तकनीकी प्रबंधन को है एवं इसके द्वारा ही निजी क्षेत्रों से हम प्रतिस्पर्धा कर सकते हैं । अच्छी ग्राहक सेवा प्रदान कर सकते हैं। यदि हम निजी क्षेत्र को देखें तो पायेंगे कि कम सुरक्षित नौकरी करते हुए भी वे आज हमसे ज्यादा कार्य कर रहे हैं ।

(3) प्रतिस्पर्धा हेतु स्वनिर्माण करना

स्वैच्छिक सेवा निवृत्ति योजना के आने के बाद बैंक कर्मी स्वयं को **उत्पादक प्रतिस्पर्धी** साबित करने में जुट गये हैं । जो यह आशा उत्पन्न करते हैं कि राष्ट्रीयकृत बैंक और उनका स्टाफ पूर्ण दक्षता से ईमानदारी से कार्य करने लगे तो वे हर उस स्थिति का सामना कर सकते हैं जिससे वे स्वयं व सारा देश चिंतित है ।

(4) अर्थनीति से विश्वास बढ़ा

स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना के पश्चात ही वित्त मंत्रालय द्वारा बट्टे खातों में एकमुश्त वसूली हेतु योजना प्रारंभ हुई, जिसके द्वारा बैंक कर्मी यह सोचने को विवश भी हो गया है स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना ही नहीं अपितु लाभ हेतु अन्य प्रयास भी किये जा रहे हैं ।

(5) पदोन्नति के अवसर

स्वैच्छिक सेवा निवृत्ति योजना के पश्चात इच्छुक बैंक कर्मियों को, रिक्त पदों हेतु पदोन्नति के अवसर भी प्राप्त होंगे ।

(6) कार्यप्रणाली में सुधार

बैंकों में अनुशासनात्मक परिर्वतन के दौर का आरंभ होना जिससे कर्तव्यनिष्ठ एवं अनुशाासन प्रिय बैंककर्मी का मनोबल बढ़ेगा ।

(7) लाभ में वृद्धि

स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना से स्थापना व्ययों में कमी के कारण लाभ में वृद्धि होना स्वाभाविक है, क्योंकि अनुत्पादक, सस्ते मानव संसाधन की तुलना में उत्पादक कर्मचारी ही फायदेमंद साबित होंगे।

(8) योग्यता अनुरूप प्रोत्साहन की संभावना

भविष्य में लाभ में वृद्धि की निश्चितता को दृष्टिगत रखते हुए बैंककर्मी को उनके योग्यता या कार्यानुरूप वेतनभत्ता, प्रोत्साहन शुरू होना भी स्वाभाविक है ।

(9) स्वाभिमान

स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना से कर्मचारियों में स्वाभिमान की भावना उत्पन्न हुई, जिनका स्वार्थ नहीं होता, वे न तो पलायन करते हैं और न ही पराजय मानते हैं, जिनका सम्मान व स्वाभिमान होता है वे अपनी संस्था के प्रति त्याग एवं आदर भी प्रकट करना जानते हैं ।

सुझाव

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना के अतिरिक्त निम्न सुझाव क्रियान्वित किए गए तो बैंकिंग उद्योग अधिक लाभ प्राप्त करेगा ।

1. बैंक प्रबंधन को सकारात्मक पहल अपनाते हुए स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना से बची राशि का एक हिस्सा **प्रोत्साहन** के रूप में शेष बैंककर्मियों को दिया जाये, चूंकि दीर्घावधि में यह व्यय अपव्यय नहीं अपितु लाभकारी रहेगा ।
2. निर्धारित नीति गठित हो, जिसके तहत सभी बैंकों में तुरंत पुनर्गठन की कार्रवाई हो।
3. बैंककर्मी को नई खुली प्रतिस्पर्धा हेतु प्रशिक्षित करना ।
4. कार्यप्रणाली का निर्धारण समस्त शाखाओं की (ग्रामीण / अर्द्धशहरी) भौगोलिक व प्राकृतिक संपदा-विपदाओं को ध्यान में रखकर करना ।
5. आज बैंककर्मी, लक्ष्यों से तनावग्रस्त हैं, लक्ष्यों का आबंटन, उसकी व्यावहारिकता, संभाव्यता उसके संसाधनों पर आधारित करना ।
6. अशोध्य ऋणों की वसूली हेतु प्रत्येक कर्मचारी को शीर्ष से निम्न स्तर तक सहभागी बनाना ।
7. बड़े अशोध्य ऋणों का नियंत्रण शीर्ष स्तर पर होना ।
8. अशोध्य ऋण की वसूली हेतु कड़े नियम बनाने के प्रयास करना ।
9. मितव्ययिता एवं लाभ की दृष्टि से अनावश्यक व्ययों को शीर्ष स्तर पर हतोत्साहित करना ।
10. मानव संसाधनों में वृद्धि करना ।

प्रयुक्त शब्दावली

स्वैच्छिक	Voluntary	मित व्ययिता	Economical
उदारीकरण	Liberalisation	उत्पादक प्रतिस्पर्धी	Productive Competitor
निजीकरण	Privatisation	प्रोत्साहन	Incentive
वैश्वीकरण	Globalisation		

महत्वपूर्ण परिपत्र

बैंकिंग परिचालन और विकास विभाग

स्वयं सहायता समूहों (एस एच जी) को समूह गारंटी पर दिये गये अग्रिमों को गैर-जमानती गारंटियों और अग्रिमों की सीमा से छूट

कृपया 29 अक्तूबर 2002 के गवर्नर के पत्र एमपीडी सं.बीसी 222/07.01.279/2002-03 के साथ संलग्न वर्ष 2002-03 के लिए 'मौद्रिक और ऋण नीति की मध्यकालीन समीक्षा' संबंधी वक्तव्य का पैरा 114 देखें ।

2. वर्तमान में, बैंकों से अपेक्षा की जाती है कि वे गैर-जमानती गारंटियों के रूप में अपनी वचनबद्धताओं को इस प्रकार सीमित करें कि बैंक की बकाया गैर-जमानती गारंटियों तथा अनेक बकाया गैर-जमानती अग्रिमों के जोड़ का 20 प्रतिशत उनके कुल बकाया अग्रिमों के 15 प्रतिशत से अधिक न हो (26 जुलाई के मास्टर परिपत्र बैंपविवि. सं. डीआइआर . बीसी.07/13.03.00/2002-03 के पैराग्राफ 2.2 और 2.3 देखें) ।

3. बैंक सामान्यतः स्वयं सहायता समूहों (एसएचजी) को किसी जमानत पर जोर दिये बिना समूह गारंटी पर उधार देते हैं । स्वयं सहायता समूहों को दिये गये बैंक के अग्रिमों से संबंधित उच्च वसूली दर पर विचार करते हुए और इस बात का ध्यान रखते हुए कि यह कार्यक्रम गरीबों के लिए मददगार है, यह निर्णय लिया गया है कि, **आगे सूचना दिये जाने तक गैर-जमानती गारंटियों और अग्रिमों के बारे में विवेकपूर्ण मानदंडों की गणना के प्रयोजनार्थ स्वयं सहायता समूहों को समूह गारंटी पर बैंकों द्वारा दिये गये गैर-जमानती अग्रिमों को शामिल नहीं किया जाये । एक वर्ष के बाद कुल गैर-जमानती अग्रिमों में वृद्धि और स्वयं सहायता समूहों को अग्रिमों के वसूली कार्य-निष्पादन को ध्यान में रखते हुए इस मामले की समीक्षा की जायेगी ।**

(संदर्भ : बैंपविवि.सं. बीपी.39/21.04.141/2002-03, दिनांक 6 नवंबर, 2002)

मौद्रिक और ऋण नीति 2002-03 की मध्यावधि समीक्षा - जमा प्रमाणपत्र

कृपया आप 'वर्ष 2002-03 के लिए मौद्रिक और ऋण नीति की मध्यावधि समीक्षा ' के संबंध में गवर्नर महोदय के वक्तव्य का जमा प्रमाणपत्र संबंधी पैराग्राफ 87 देखें, जिसे 29 अक्तूबर 2002 के पत्र सं. एमपीडी बीसी 222/07.01.279/2002-03 के साथ भेजा गया है ।

2. विद्यमान अनुदेशों के अनुसार जमा प्रमाणपत्र, उनके अंकित मूल्य पर डिस्काउंट के साथ जारी करने होते हैं और जारीकर्ता बैंक डिस्काउंट की दर स्वतंत्र रूप से निर्धारित कर सकता है । इसमें और अधिक लचीलापन लाने के उद्देश्य से अब से जमा प्रमाणपत्र कूपन दर वाले लिखत के रूप में भी जारी किये जा सकते हैं । अतः निवेशकों और जारीकर्ताओं दोनों को अतिरिक्त विकल्प प्रदान करने के उद्देश्य से यह निर्णय किया गया है कि बैंक **अस्थिर (चल) दर** के आधार पर जमा प्रमाणपत्र जारी कर सकते हैं, बशर्ते अस्थिर दर की गणना की पद्धति वस्तुनिष्ठ, पारदर्शी और बाज़ार पर आधारित हो ।

3. अस्थिर दर पर आधारित जमा प्रमाणपत्रों पर ब्याज निश्चित समय अंतरालों पर ऐसे पूर्व निर्धारित फार्मूले के अनुसार पुनर्निर्धारित किया जाये, जिससे पारदर्शी बेंचमार्क से अंतर (स्प्रेड) स्पष्ट होता हो । इस संबंध में मानक प्रणाली और प्रलेखीकरण संबंधी जानकारी बाज़ार के भागीदारों से परामर्श करके नियत आय मुद्रा बाज़ार एवं व्युत्पन्नी संघ (फिम्डा) द्वारा अलग से जारी की जायेगी ।

(संदर्भ : बैंपविवि.सं. बीपी.बीसी.43/21.03.053/2002-03, दिनांक 16 नवंबर, 2002)

डेरिवेटिव उत्पादों के ऋण आदि जोखिम की माप

कृपया आप एकल/समूह ऋणकर्ताओं को ऋण आदि जोखिम के

बारे में हमारे 2 मई 2001 के परिपत्र बैपविवि.सं. बीपी.बीसी116/21.04.48/2000-1 का पैराग्राफ बी.2 देखें । उसमें उल्लेख है कि वर्तमान वायदा दर करारों (एफआरए) और ब्याज दर स्वैप (आइ आर एस) जैसे डेरिवेटिव उत्पादों को मूल जोखिम पद्धति के अनुसार काल्पनिक मूल राशि के प्रति परिवर्तन गुणक लागू करके ऋण आदि जोखिम की गणना करने के लिए हिसाब में लिया जाता है । यह भी बताया गया था कि 1 अप्रैल 2003 से बैंकों को चाहिए कि वे एकल / समूह उधारकर्ता जोखिम का निर्धारण करने में **गैर निधि आधारित सीमाओं** को 100 प्रतिशत पर हिसाब में लेने के अतिरिक्त विदेशी मुद्रा की वायदा संविदा तथा अन्य डेरिवेटिव उत्पादों को भी उनके प्रतिस्थापन लागत मूल्य पर हिसाब में लें । प्रतिस्थापन लागत मूल्य का हिसाब लगाने के लिए बैंकों द्वारा अपनायी जानेवाली पद्धति नीचे दी गयी है ।

2. पूंजी माप और पूंजी मानक, 1988 के बैंकिंग पर्यवेक्षण के अंतरराष्ट्रीय कनर्वजेन्स से संबंधित बासल समिति के अनुसार डेरिवेटिव उत्पादों में ऋण जोखिम के कारण जोखिम का मूल्यांकन करने की दो पद्धतियां हैं, अर्थात् (1) **मूल जोखिम पद्धति,** और (2) **चालू जोखिम पद्धति** ।

2.1 मूल जोखिम पद्धति के अंतर्गत ऋण आदि जोखिम की गणना काल्पनिक मूल राशि के प्रति परिवर्तन गुणक से गुणा करके डेरिवेटिव लेनदेन के प्रारंभ में की जाती है । मूल जोखिम पद्धति का प्रयोग करके ऋण की समान राशि निकालने के लिए बैंक लिखत के स्वरूप और उसकी मूल अवधिपूर्णता के अनुसार प्रत्येक लिखत की काल्पनिक मूल राशि के प्रति निम्नलिखित परिवर्तन गुणक अपनायेगा :

मूल अवधिपूर्णता	**काल्पनिक मूल राशि पर परिवर्तन गुणक लागू करना**	
	ब्याज दर संविदा	**विदेशी मुद्रा दर संविदा**
एक वर्ष से कम	0.5 प्रतिशत	2.0 प्रतिशत
एक वर्ष और दो वर्ष से कम	1.0 प्रतिशत	5.0 प्रतिशत (2 प्रतिशत + 3 प्रतिशत)
प्रत्येक अतिरिक्त वर्ष के लिए	1.0 प्रतिशत	3.0 प्रतिशत

2.2 ब्याज दर और विदेशी मुद्रा संविदाओं पर ऋण जोखिम के कारण जोखिम का अनुमान लगाने की दूसरी पद्धति (चालू जोखिम पद्धति) है। इन संविदाओं को बाज़ार के अनुसार हिसाब में लेकर चालू प्रतिस्थापन लागत की आवधिक गणना करना, इस प्रकार बिना किसी अनुमान की आवश्यकता के चालू जोखिम निकालना और फिर एक गुणक ('एड ऑन') जोड़ना, जिससे संविदा की शेष अवधि में भविष्य का संभावित जोखिम परिलक्षित हो । इसलिए चालू जोखिम पद्धति के अंतर्गत बैंक तुलनपत्र से इतर ब्याज दर और लिखतों के बराबर ऋण आदि जोखिम की गणना करने के लिए निम्नलिखित पद्धति अपनायेगा :

(i) धनात्मक मूल्य (अर्थात् जब बैंक को प्रतिपक्ष से धन प्राप्त करना है) वाली उसकी सभी संविदाओं की कुल प्रतिस्थापन लागत ('बाज़ार के अनुसार प्राप्त') ; और

(ii) ऋण आदि जोखिम में भविष्य में संभावित परिवर्तनों की राशि, जिसकी गणना संविदा की कुल काल्पनिक मूल राशि को शेष अवधि के अनुसार परिवर्तन गुणकों के निम्नलिखित क्रेडिट द्वारा गुणा करके की जायेगी :

शेष अवधि पूर्णता	**काल्पनिक मूल राशि पर परिवर्तन गुणक लागू करना**	
	ब्याज दर संविदा	**विदेशी मुद्रा दर संविदा**
एक वर्ष से कम	शून्य	1.0 प्रतिशत
एक वर्ष और उससे अधिक	0.5 प्रतिशत	5.0 प्रतिशत

2.3 बैंकों को चाहिए कि वे डेरिवेटिव उत्पादों की बाज़ार के अनुसार गणना कम से कम महीने में एक बार करें और वे डेरिवेटिव उत्पादों का बाज़ार मूल्य निर्धारित करने के लिए अपनी आंतरिक पद्धतियां अपना सकते हैं ।

2.4 किसी एकल करेंसी फ्लोटिंग / अस्थिर ब्याज दर स्वैपों के लिए संभावित ऋण आदि जोखिम की गणना करने की बैंकों से अपेक्षा नहीं की जायेगी । इन संविदाओं पर ऋण आदि जोखिम का मूल्यन पूरी तरह से बाज़ार के अनुसार मूल्य के आधार पर होगा ।

3. चालू जोखिम पद्धति डेरिवेटिव उत्पाद में ऋण जोखिम की माप के लिए एक सही पद्धति होने के कारण इसे बैंक अपना सकते हैं । यदि कोई पद्धति बैंक चालू जोखिम पद्धति अपनाने की स्थिति

में न हो तो वह मूल जोखिम पद्धति अपना सकता है परंतु कोशिश यह होनी चाहिए कि भविष्य में चालू जोखिम पद्धति की ओर बढ़ा जाये ।

4. बैंकों को सूचित किया जाता है कि वे एकल / समूह उधारकर्ता की जोखिम का निर्धारण करने के लिए 1 अप्रैल 2003 से सभी डेरिवेटिव उत्पादों के लिए सतत रूप में उपर्युक्त दो पद्धतियों में से कोई एक पद्धति अपनायें ।

(संदर्भ : बैपविवि. सं. बीपी.बीसी 48/21.03.054/2002-03, दिनांक 13 दिसंबर, 2002)

बैंकिंग पर्यवेक्षण विभाग

जोखिम आधारित आंतरिक लेखा परीक्षा

कृपया आप 'बैंकों के जोखिम-आधारित पर्यवेक्षण की ओर अग्रसर होना' से संबंधित चर्चा पेपर का भाग II देखें जो अगस्त, 2001 के हमारे पत्र सं. डीबीएस .सीओ.आरबीएस.58/36.01.002/2001-02 के द्वारा आपको भेजा गया था ; इसमें बैंक-स्तरीय व्यवस्था के 5 क्षेत्रों की पहचान की गई थी, यह, रिज़र्व बैंक द्वारा बैंकों के जोखिम आधारित पर्यवेक्षण (आरबीएस) में सुचारु स्विचओवर की सुविधा प्रदान करने में महत्वपूर्ण होगा । इनमें से एक क्षेत्र बैंकों द्वारा जोखिम आधारित आंतरिक लेखा-परीक्षा प्रणाली को प्रारंभ करने से संबंधित है । इससे संबंधित दिशा-निर्देशों को अब अंतिम रूप दे दिया गया है और जोखिम-आधारित आंतरिक लेखा-परीक्षा प्रणाली से संबंधित मार्गदर्शी नोट संलग्न हैं ।

2. आपसे निवेदन है कि मार्गदर्शी नोट को अगली बैठक में निदेशक-बोर्ड के समक्ष विचार-विमर्श के लिए रखा जाए । बैंकों को चाहिए कि वे अपनी प्रचलित आंतरिक लेखा-परीक्षा प्रणाली की समीक्षा करने के लिए तत्काल आवश्यक कदम उठाएं और अपनी जोखिम प्रबंधन परंपराओं, व्यापारिक अपेक्षाओं, जन शक्ति की उपलब्धता को ध्यान में रखते हुए जोखिम-आधारित आंतरिक लेखा-परीक्षा प्रणाली में **चरणबद्ध रूप में** परिवर्तन लाने के लिए तैयार रहें ।

3. बैंकों को चाहिए कि वे एक कार्य-दल गठित करें जिसमें वरिष्ठ कार्यपालक हों जिन्हें जोखिम-आधारित आंतरिक लेखा-परीक्षा में स्विचओवर करने के लिए **कार्य योजना** तैयार करने की जिम्मेदारी सौंपी जाए । **कार्य-दल** संक्रमण संबंधी और प्रबंधन में परिवर्तन संबंधी विषयों की पहचान करके उस पर ध्यान केन्द्रित करें और कार्य-योजना का कार्यान्वयन करे ; **संक्रमण कालीन अवधि** में हुई प्रगति की निगरानी करें और इसकी सूचना आवधिक रूप से निदेशक बोर्ड और उच्च प्रबंध-तंत्र को दें । जोखिम-आधारित आंतरिक लेखा-परीक्षा के कार्यान्वयन में हुई प्रगति के संबंध में 31 मार्च, 2003 को समाप्त तिमाही से तिमाही रिपोर्ट हमें तथा जिस क्षेत्रीय कार्यालय के क्षेत्राधिकार में बैंक का प्रधान-कार्यालय आता है, उस बैंकिंग पर्यवेक्षण विभाग के क्षेत्रीय कार्यालय में प्रस्तुत की जाए ।

अनुलग्नक

जोखिम आधारित आंतरिक लेखा-परीक्षा पर मार्गदर्शी नोट

परिचय

वित्तीय लिखतों और बाज़ार के विस्तार के कारण बैंक विभिन्न ऋण आदि जोखिमों का उत्तरदायित्व ले पाए हैं । इन गतिविधियों तथा भारतीय वित्तीय क्षेत्र में विनिमय में बढ़ती ढील तथा उदारीकरण के परिप्रेक्ष्य में बैंकिंग कारोबार के लिए प्रभावप्रणाली जोखिम तथा आंतरिक नियंत्रण प्रणालियां महत्वपूर्ण हो गई हैं । नए बासले कैपिटल एकॉर्ड की प्रस्तावित शुरुआत को देखते हुए भी यह महत्वपूर्ण है, जिसके तहत बैंक द्वारा रखी गई पूंजी पर भी उठाए गए जोखिम तथा रिज़र्व बैंक द्वारा बैंकों के जोखिम आधारित पर्यवेक्षण (आरबीएस) के लिए की जाने वाली प्रस्तावित कार्रवाई के अधिक नज़दीक रहेगा । आरबीएस के प्रस्तावित दृष्टिकोण के अंतर्गत पर्यवेक्षी प्रक्रिया में बैंकों के आंतरिक लेखा-परीक्षकों द्वारा किए गए काम को नियंत्रित करने की अपेक्षा रहेगी । इस संबंध में, 'बैंकों के जोखिम आधारित पर्यवेक्षण की ओर अग्रसर होना, से संबंधित 13 अगस्त 2001 का चर्चा पत्र देखें । चर्चा पत्र के भाग II में बैंकों के लिए अपेक्षित कार्रवाई योग्य 5 महत्वपूर्ण क्षेत्रों की स्पष्ट रूप से पहचान की गई है जिसमें आरबीएस में सरलता पूर्वक स्विचओवर करने के लिए दिसंबर 2002 तक जोखिम आधारित आंतरिक लेखा-परीक्षा प्रणाली को प्रारंभ करना शामिल है ।

सुदृढ आंतरिक लेखा-परीक्षा कार्य प्रणाली, आंतरिक नियंत्रण प्रणाली को प्रभावशाली बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है । लेखा-परीक्षा कार्य-प्रणाली से, जोखिम प्रबंधन तथा आंतरिक नियंत्रणों, जिनमें बैंक द्वारा नियामक अनुपालन शामिल है, पर

प्रबंध-तंत्र को उच्च गुणवत्ता युक्त परामर्श प्राप्त होना चाहिए । ऐतिहासिक रूप से, बैंकों में आंतरिक लेखा-परीक्षा प्रणाली, लेन-देन संबंधी जांच, रिकार्डों और वित्तीय रिपोर्टों के हिसाब की यथार्थता और विश्वसनीयता की जांच, नियंत्रण रिपोर्टों की सत्यनिष्ठा, विश्वसनीयता तथा समयोचितता तथा कानूनी और विनियामक अपेक्षाओं पर ध्यान केन्द्रित करती रही हैं तथापि, परिवर्तनीय परिदृष्य में इस प्रकार की जांच अपने आप में पर्याप्त नहीं होगी । बैंकों में जोखिम प्रबंधन क्रियाविधि तथा आंतरिक नियंत्रण प्रणालियों की पर्याप्तता तथा प्रभावशीलता का मूल्यांकन करने के लिए आंतरिक लेखा-परीक्षा के विषय-क्षेत्र को व्यापक तथा पुनः निर्देशित करने की अवश्यकता है ।

इन उद्देश्यों को पूरा करने के लिए, बैंकों को क्रमिक रूप से जोखिम आधारित आंतरिक लेखा-परीक्षा की ओर अग्रसित होना होगा, जिसमें चुनिंदा लेन-देन की जांच के अतिरिक्त, बैंकों के परिचालनों के विभिन्न क्षेत्रों में प्रचलित जोखिम प्रबंधन प्रणलियों तथा नियंत्रण संबंधी क्रियाविधियों का मूल्यांकन भी शामिल है । जोखिम आधारित आंतरिक लेखा-परीक्षा कार्यान्वयन से तात्पर्य होगा कि जोखिमों को कम करने के लिए आंतरिक लेखा-परीक्षकों की भूमिका पर अधिक जोर दिया जाता है । लेन-देन संबंधी उपयुक्त जांच के लिए अतिरिक्त प्रभावशाली जोखिम प्रबंधन तथा नियंत्रणों पर फोकस करते समय, जोखिम-आधारित आंतरिक लेखा-परीक्षा चालू जोखिमों को कम करने के लिए केवल सुझाव देगी बल्कि संभावित जोखिमों के क्षेत्रों को भी उजागर करेगी तथा बैंक को विभिन्न जोखिमों से बचाव करने के लिए महत्वपूर्ण भूमिका अदा करेगी ।

जोखिम आधारित आंतरिक लेखा-परीक्षा संबंधी नीति

जोखिम-आधारित आंतरिक लेखा-परीक्षा के तहत, केन्द्र बिन्दु वर्तमान प्रणाली के पूर्ण स्तरीय लेन-देन जांच से बदल कर जोखिम की पहचान करने, लेखा-परीक्षा के क्षेत्रों की प्राथमिकताओं तथा जोखिम निर्धारण के अनुसार लेखा-परीक्षा संसाधनों के आबंटन की ओर चला जाएगा । अतः बैंकों को जोखिम आधारित आंतरिक लेखा-परीक्षा करने के लिए बोर्ड विधिवत् अनुमोदित **सुपरिभाषित नीति** का विकास करने की आवश्यकता है । इस नीति में जोखिम संबंधी क्षेत्रों की पहचान करने के लिए जोखिम-निर्धारण क्रियाविधि शामिल है जिसके आधार पर लेखा-परीक्षा योजना तैयार की जाएगी । नीति में अधिकतम समयावधि भी निर्धारित की जानी चाहिए जिसके बाद की अवधि के लिए कम जोखिम संबंधी कारोबारी गतिविधियों /अवसरों को भी लेखा-परीक्षा किए बिना नहीं छोड़ा जाना चाहिए ।

कार्यमूलक स्वतंत्रता

आंतरिक लेखा-परीक्षा विभाग को आंतरिक नियंत्रण प्रक्रिया से स्वतंत्र होना चाहिए ताकि किसी प्रकार के हित संबंधी विरोध से बचा जा सके और नियत कार्य पूरा करने के लिए बैंक के अंदर ही एक उपयुक्त तालमेल बनाया जाना चाहिए । इनको अन्य लेखा-जोखा रखने अथवा परिचालनगत कार्य करने की जिम्मेदारी नहीं सौंपी जानी चाहिए । प्रबंध-तंत्र को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि आंतरिक लेखा-परीक्षा स्टाफ अपनी ड्यूटी वस्तुनिष्ठता के साथ और निष्पक्षता से निभाता है । सामान्यतः आंतरिक लेखा-परीक्षा के प्रधान को, निदेशक बोर्ड /बोर्ड की लेखा-परीक्षा समिति[1] को रिपोर्ट करना चाहिए ।

निदेशक बोर्ड [2] तथा उच्च-प्रबंध तंत्र प्रभावशाली जोखिम आधारित आंतरिक लेखा-परीक्षा प्रणाली को लागू करने के लिए उत्तरदायी होंगे और यह सुनिश्चित करेंगे कि पूरा बैंक इसके महत्व को समझता है । आंतरिक लेखा-परीक्षा कार्य की सफलता इस बात पर अधिक निर्भर करती है कि बैंक के प्रबंध-तंत्र ने बैंक के कार्यों के संबंध में मार्गदर्शन करने हेतु इन पर किस सीमा तक विश्वास किया है ।

जोखिम निर्धारण

जोखिम आधारित आंतरिक लेखा-परीक्षा केवल जोखिम आधारित लेखा-परीक्षा योजना को कार्यान्वित करने के लिए ही जोखिम का निर्धारण करती है । स्वतंत्र गतिविधि के रूप में जोखिम निर्धारण, विभिन्न स्तरों पर जोखिमों(कंपनी तथा शाखा; संविभाग तथा वैयक्तिक लेन-देन आदि) को शामिल करता है तथा जोखिमों की पहचान करने, उनकी मात्रा को जानने, उनकी निगरानी और नियंत्रण करने के लिए कार्य करता है । आंतरिक लेखा-परीक्षा विभाग को चाहिए कि वह बैंक द्वारा किए गए कारोबार के आकार तथा उसकी जटिलता को मद्देनज़र रखते हुए, निदेशक बोर्ड के अनुमोदन से जोखिम निर्धारण क्रियाविधि का उपाय करे ।

---

1. विदेशी बैंकों के मामले में भारतीय परिचालनों के लिए रिपोर्टिंग सीईओ को की जाए ।
2. इस दस्तावेज में बोर्ड / बोर्ड की लेखा परीक्षा समिति शब्द का तात्पर्य विदेशी बैंकों के मामले में स्थानीय परामर्शदात्री बोर्ड से लिया जाए यदि इसके लिए अन्यथा उल्लेख न किया गया हो तो ।

जोखिम निर्धारण प्रक्रिया में अन्य बातों के साथ-साथ निम्नलिखित शामिल होने चाहिए :-

* बैंक द्वारा की गई विभिन्न गतिविधियों में निहित कारोबारी जोखिम की पहचान ।
* कारोबारी गतिविधियों ('नियंत्रण जोखिम') से संबंधित निहित जोखिमों की निगरानी के लिए नियंत्रण-प्रणालियों की प्रभावशीलता का मूल्यांकन ।
* निहित कारोबारी जोखिमों तथा नियंत्रण जोखिमों आदि दोनों तत्वों को हिसाब में लेने के लिए जोखिम-मैट्रिक्स बनाना । नमूने के तौर पर जोखिम-मैट्रिक्स को बॉक्स मद के रूप में दिखाया गया है ।

जोखिम मैट्रिक्स

निहित कारोबारी जोखिम				
	उच्च	ए उच्च जोखिम	बी बहुत अधिक जोखिम	सी अत्यधिक उच्च जोखिम
	मध्यम	डी मध्यम जोखिम	ई उच्च जोखिम	एफ बहुत अधिक जोखिम
	निम्न	जी निम्न जोखिम	एच मध्यम प्रकार के जोखिम	आई उच्च प्रकार के जोखिम
		निम्न	मध्यम	उच्च
		नियंत्रण जोखिम →		

निहित कारोबारी जोखिम बैंक के किसी क्षेत्र विशेष /गतिविधि में आंतरिक जोखिम को दर्शाते हैं और जोखिमों की गंभीरता को देखते हुए उन्हें निम्न, मध्यम, और उच्च श्रेणियों के वर्ग में विभाजित किया जा सकता है ।

नियंत्रण जोखिम, अपर्याप्त नियंत्रण प्रणालियों, वर्तमान नियंत्रण प्रक्रियाओं में कमी / अंतर तथा/ अथवा संभावित असफलता से उत्पन्न होता है । समग्र जोखिम निर्धारण में, निहित कारोबारी जोखिमों तथा नियंत्रण जोखिमों दोनों पर प्रकाश डाला जाना चाहिए । जोखिम मैट्रिक्स के प्रत्येक सेल में जिस प्रकार दिखाई देता है, समग्र जोखिम निर्धारण को नीचे स्पष्ट किया गया है ।

ए- उच्च जोखिम-हालांकि नियंत्रण जोखिम कम है, फिर भी उच्च सहज कारोबारी जोखिमों के कारण यह उच्च जोखिम क्षेत्र है ।

बी- बहुत अधिक जोखिम- उच्च सहज कारोबारी जोखिम मध्यम प्रकार के नियंत्रण जोखिम के साथ मिलकर इसे बहुत अधिक उच्च जोखिम क्षेत्र बना देता है ।

सी- अत्यधिक उच्च जोखिम - सहज कारोबारी जोखिम तथा नियंत्रण जोखिम दोनों ही उच्च प्रकार के हैं जो इसे अत्यधिक उच्च जोखिम क्षेत्र बना देते है । इस क्षेत्र की ओर तत्काल लेखा-परीक्षा संबंधी ध्यान दिए जाने, बैंक के उच्च प्रबंध-तंत्र द्वारा सतत निगरानी के साथ-साथ लेखा-परीक्षा संसाधनों के अधिकतम आबंटन की आवश्यकता है ।

डी- मध्यम प्रकार का जोखिम-हालांकि नियंत्रण जोखिम निम्न कोटि का है, फिर भी मध्यम कारोबारी जोखिम के कारण यह मध्यम जोखिम क्षेत्र है ।

ई- उच्च जोखिम-हालांकि सहज कारोबारी जोखिम मध्यम है, फिर भी नियंत्रण जोखिम के मध्यम प्रकार के होने के कारण यह उच्च जोखिम क्षेत्र है ।

एफ- बहुत अधिक उच्च जोखिम क्षेत्र -हालांकि सहज कारोबारी जोखिम मध्यम प्रकार का है, फिर भी उच्च नियंत्रण जोखिम के कारण यह बहुत अधिक उच्च जोखिम क्षेत्र है ।

जी- निम्न जोखिम - सहज कारोबारी जोखिम तथा नियंत्रण जोखिम दोनों ही निम्न कोटी के हैं ।

एच- मध्यम जोखिम-सहज कारोबारी जोखिम निम्न कोटी का है और नियंत्रण जोखिम मध्यम कोटी का है ।

आई-उच्च जोखिम-हालांकि सहज कारोबारी जोखिम निम्न कोटी का है, फिर भी उच्च नियंत्रण जोखिम के कारण यह उच्च जोखिम क्षेत्र बन जाता है ।

निहित कारोबारी जोखिमों तथा नियंत्रण जोखिमों के स्तर निर्धारण का आधार (उच्च, मध्यम, निम्न) तथा प्रवृत्ति (वर्धमान, स्थिर, ह्रासमान) स्पष्ट रूप से दर्शाया जाए । जोखिम-निर्धारण गुणावत्तात्मक तथा मात्रात्मक दोनों दृष्टिकोणों का उपयोग कर सकता है । जबकि ऋण, बाज़ार तथा परिचालनगत जोखिमों की मात्रा, मात्रात्मक निर्धारण द्वारा निश्चित की जा सकती है , विभिन्न कारोबारी गतिविधियों में नियंत्रणों की गुणवत्ता का मूल्यांकन करने के लिए गुणवत्ता दृष्टिकोण को अपनाया जाए । बैंक को होने वाले अधिक जोखिमों वाले क्षेत्रों में ध्यान केन्द्रित करने के लिए जोखिम की गतिविधि-वार तथा स्थान-वार पहचान की जाए ।

जोखिम निर्धारण क्रियाविधि में अन्य बातों के साथ-साथ निम्नलिखित मापदंड शामिल किए जाएं :

* पिछली आंतरिक लेखा-परीक्षा रिपोर्टें तथा अनुपालन ।
* कारोबारी क्षेत्रों में प्रस्तावित परिवर्तन अथवा फोकस में परिवर्तन
* प्रबंधन / मुख्य कार्मिक में महत्वपूर्ण परिवर्तन
* अद्यतन विनियामक जांच रिपोर्ट के परिणाम
* बाह्य लेखा-परीक्षकों की रिपोर्टें
* उद्योग की प्रवृत्ति तथा अन्य वातावरणीय तत्व
* पिछली लेखा-परीक्षा के बाद से बीत चुका समय
* कारोबार का परिणाम तथा गतिविधियों की जटिलता
* बजट के मुकाबले कार्य-निष्पादन में पर्याप्त विभिन्नताएं

जोखिम-निर्धारण के सही होने के लिए एमआईएस और समग्र आंकड़ों की आवश्यकता होगी । नए उत्पादों को प्रारंभ करने, सूचना व्यवसाय में परिवर्तन, लेखा संबंधी परंपरा/नीति आदि में परिवर्तन जैसी सभी गतिविधियों की जानकारी आंतरिक लेखा-परीक्षा कार्य को करायी जानी चाहिए ।

लेखा परीक्षा योजना

बोर्ड द्वारा अनुमोदित वार्षिक लेखा-परीक्षा योजना में योजनाबद्ध लेखा-परीक्षा कार्य के लिए अनुसूची तथा औचित्य को शामिल किया जाना चाहिए । इसमें जोखिम के स्तर और दिशा के आधार पर सभी जोखिम क्षेत्रों और उनकी प्राथमिकताओं को भी शामिल किया जाना चाहिए । उदाहरण के रूप में, उच्च, बहुत अधिक उच्च अथवा अत्यधिक उच्च जोखिम (जोखिम मैट्रिक्स के आधार पर पहचानी गई) गतिविधियों की लेखा-परीक्षा मध्यम अथवा निम्न जोखिम क्षेत्रों के मुकाबले कम अंतरालों में की जाए, मध्यम अथवा निम्न जोखिम क्षेत्रों की लेखा-परीक्षा लागू होने वाले विनियामक दिशा-निर्देशों के अधीन दीर्घ अंतरालों पर की जाए ।

कार्य क्षेत्र

जोखिम आधारित आंतरिक लेखा-परीक्षा का प्राथमिक केन्द्र बिन्दु बैंकों के परिचालनों में जोखिम प्रबंधन तथा नियंत्रण संबधी रूपरेखा की पर्याप्तता तथा प्रभाव के बारे में बोर्ड तथा उच्च प्रबंधन-तंत्र को उचित आश्वासन प्रदान करना होगा । नियंत्रण संबंधी रूपरेखा की प्रभावशीलता की जांच करते समय, जोखिम-आधारित आंतरिक लेखा-परीक्षा को चाहिए कि वह उचित रिकॉर्डिंग तथा प्रमुख अपवादों और आधिक्य की भी सूचना दे । लेन-देन संबंधी जांच, जोखिम-आधारित आंतरिक लेखा-परीक्षा का एक आवश्यक पहलू बना रहेगा । लेन-देन संबंधी जांच की सीमा को जोखिम-निर्धारण के आधार पर निश्चित किया जाएगा । उदाहरणार्थ, यदि कोई क्षेत्र जोखिम मैट्रिक्स के सेल 'सी -अत्यधिक उच्च जोखिम' के अंतर्गत आता है तो बैंक को लेन-देन संबंधी शत प्रतिशत जांच करनी चाहिए । यदि कोई क्षेत्र सेल 'बी-बहुत अधिक उच्च जोखिम' अथवा 'एफ-बहुत अधिक उच्च जोखिम' के अंतर्गत आता हो तो और जोखिमों के बढ़ने की प्रवृत्ति दिखाई दे रही हो तो बैंक लेन-देन संबंधी शत प्रतिशत जांच पर विचार कर सकता है । बैंक निम्न प्रकार के जोखिम क्षेत्रों के संबंध में अचानक लेन-देन संबंधी जांच पर भी विचार कर सकता है, जहां पर अपेक्षाकृत दीर्घ अवधि के अंतरालों में लेखा-परीक्षा की जाएगी ।

बैंक तालिका में दिए गए अनुसार जोखिम लेखा-परीक्षा मैट्रिक्स तैयार कर सकते हैं ।

लेखा-परीक्षा योजना में निम्नलिखित क्षेत्रों पर अधिक ध्यान देने के लिए लेखा-परीक्षा कार्य को प्राथमिकता दी जानी चाहिए :

(i) उच्च परिमाण और उच्च बारंबारता
(ii) उच्च परिमाण तथा मध्यम बारंबारता
(iii) मध्यम परिमाण और उच्च बारंबारता
(iv) उच्च परिमाण और निम्न बारंबारता
(v) मध्यम परिमाण और मध्यम बारंबारता

प्रत्येक बैंक को निम्न, मध्यम, उच्च, बहुत उच्च और अत्यधिक उच्च जोखिम क्षेत्रों के लिए जोखिम-आधारित आंतरिक लेखा-परीक्षा का वास्तविक कार्य क्षेत्र निश्चित करना चाहिए । तथापि, इसे कम-से कम निम्नलिखित की समीक्षा /रिपोर्ट तैयार करनी चाहिए :-

* वह प्रक्रिया जिसके द्वारा जोखिमों की पहचान की जाती है

जोखिम लेखा-परीक्षा मैट्रिक्स

जोखिम (एम) का परिमाण ↑			
उच्च	उच्च एम निम्न एफ	उच्च एम मध्यम एफ	उच्च एम उच्च एफ
मध्यम	मध्यम एम निम्न एफ	मध्यम एम मध्यम एफ	मध्यम एम उच्च एफ
निम्न	निम्न एम निम्न एफ	निम्न एम मध्यम एफ	निम्न एम उच्च एफ
	निम्न	मध्यम	उच्च

जोखिम (एफ) की **बारंबारता** →

और विभिन्न क्षेत्रों में उनकी व्यवस्था की जाती है ;

* विभिन्न क्षेत्रों में नियंत्रण संबंधी वातावरण;
* नियंत्रण संबंधी व्यवस्था में यदि कोई अंतर हो जिससे धोखाधड़ी तक पहुंचा जा सके, धोखाधड़ी की प्रवृत्ति वाले क्षेत्रों की पहचान;
* आंकड़ों की सत्यनिष्ठा, एम आई एस की विश्वसनीयता और सत्यनिष्ठा;
* आंतरिक, विनियामक तथा सांविधिक अनुपालन;
* बजट नियंत्रण तथा कार्य-निष्पादन समीक्षाएं;
* लेन-देन संबंधी जांच/आवश्यक समझी जाने वाली सीमा तक परिसंपत्तियों का सत्यापन;
* जोखिम-आधारित आंतरिक लेखा-परीक्षा रिपोर्ट का निगरानी अनुपालन
* जोखिम-आधारित आंतरिक लेखा-परीक्षा की तुलना में लेखा-परीक्षा योजना के तहत जोखिमों के निर्धारण में यदि कोई विभिन्नता हो ।

जोखिम-आधारित आंतरिक लेखा-परीक्षा के कार्य क्षेत्र में लागू की गई प्रणालियों की समीक्षा को शामिल किया जाए ताकि काले धन पर नियंत्रण करने, संभावित सहज कारोबारी जोखिमों और नियंत्रण जोखिमों, यदि कोई हों की पहचान; विभिन्न सुधारात्मक उपायों के संबंध में सुझाव देने तथा उस संबंध में की गई कार्रवाई की निगरानी संबंधी अनुवर्ती समीक्षाओं का अनुपालन सुनिश्चित किया जा सके ।

संप्रेषण

जोखिम आधारित आंतरिक लेखा-परीक्षा स्टाफ तथा प्रबंध-तंत्र के बीच के संप्रेषण चैनलों को चाहिए कि वे नकारात्मक और संवेदनशील निष्कर्षों की रिपोर्टिंग को प्रोत्साहित करें । जैसे ही गंभीर प्रकार की कमियां दिखाई दें उन सभी की सूचना प्रबंध-तंत्र के उपयुक्त स्तर को दी जाए । बैंक के कारोबार को नुकसान पहुँचाने वाले उल्लेखनीय मुद्दों की जानकारी तत्परता से निदेशक-बोर्ड, लेखा-परीक्षा समिति अथवा उच्च प्रबंध-तंत्र, जो भी उपयुक्त हो, उसे दी जाए ।

कार्य निष्पादन संबंधी मूल्यांकन

आंतरिक लेखा-परीक्षा विभाग को चाहिए कि वह अनुमोदित लेखा-परीक्षा योजना की तुलना में, की गई जोखिम-आधारित आंतरिक लेखा-परीक्षा की वार्षिक आधार पर अथवा उससे भी कम अंतराल पर आवधिक समीक्षाएं आयोजित करें । कार्य-निष्पादन समीक्षा में जोखिम-आधारित आंतरिक लेखा-परीक्षा द्वारा,पहचाने गए जोखिमों को कम करने की प्रभावशीलता के मूल्यांकन को भी शामिल किया जाए।

निदेशक बोर्ड /बोर्ड की लेखा-परीक्षा समिति को चाहिए कि वह जोखिम-आधारित आंतरिक लेखा-परीक्षा की विश्वसनीयता, यथार्थता तथा उद्देश्य को जानने के लिए आवधिक रूप से उनके कार्य-निष्पादन का निर्धारण करें। जोखिम-आधारित आंतरिक लेखा-परीक्षा द्वारा पता लगाई गई जोखिम-संबंधी रूपरेखा तथा लेखा-परीक्षा योजना में प्रलेखित जोखिम संबंधी रूपरेखा में यदि कोई भिन्नता हो तो उस पर गौर किया जाना चाहिए ताकि आंतरिक लेखा-परीक्षा विभाग की जोखिम-निर्धारण कार्य प्रणाली की विश्वसनीयता का मूल्यांकन किया जा सके ।

लेखा-परीक्षा संसाधन

आंतरिक लेखा-परीक्षा विभाग को उपयुक्त संसाधन और स्टाफ

उपलब्ध कराया जाए ताकि वह जोखिम आधारित आंतरिक लेखा-परीक्षा प्रणाली के अंतर्गत अपने लक्ष्यों को प्राप्त कर सकें। अपेक्षित कुशलता रखने वाले स्टाफ को जोखिम-आधारित आंतरिक लेखा-परीक्षा करने का कार्य सौंपा जाना चाहिए। उन्हें आवधिक रूप से प्रशिक्षण भी प्रदान किया जाए ताकि वे बैंक कारोबार की गतिविधियां, परिचालनगत प्रक्रियाएं, जोखिम-प्रबंधन तथा नियंत्रण प्रणालियों, एमआईएस आदि को समझ सकें।

बाहर की एजेंसियों द्वारा आंतरिक लेखा -परीक्षा व्यवस्था

निदेशक बोर्ड तथा उच्च प्रबंध-तंत्र यह सुनिश्चित करने के लिए जिम्मेदार हैं कि जोखिम-आधारित आंतरिक लेखा-परीक्षा, बाहर की एजेंसियों द्वारा होने के बावजूद प्रभावशाली ढंग से काम करती रहती हैं। अन्य बातों के साथ-साथ निम्नलिखित पहलुओं को ध्यान में रखा जाए ताकि संसाधनों की कमी के कारण आंतरिक नियंत्रणों में होने वाले किसी भी प्रकार के जोखिम से बचा जा सके।

(क) जोखिम-आधारित आंतरिक लेखा-परीक्षा के लिए बाहरी व्यवस्था शुरू करने से पहले, बैंक को चाहिए कि वह इस बात से संतुष्ट होने के लिए पर्याप्त तत्परता दिखाए कि बाहरी विक्रेता में ठेके पर लिए गए कार्य के लिए आवश्यक विशेषज्ञता है। करार में, लिखित रूप में कम-से-कम निम्नलिखित बातों का उल्लेख किया जाए :-

* विक्रेता द्वारा किए जाने वाले कार्य का कार्य-क्षेत्र और उसकी बारंबारता।
* बैंक को सूचित करने का स्वरूप और उसकी बारंबारता, विक्रेता द्वारा की गई गलतियों, चूकों तथा असावधानी से होने वाले नुकसान की लागत को निश्चित करने का स्वरूप।
* यदि आवश्यक हो तो करार की शर्तों में परिवर्तनों को शामिल करने की व्यवस्था।
* वह स्थान जहां कार्य संबंधी कागज़ात स्टोर किए जाएंगे।
* आंतरिक लेखा-परीक्षा रिपोर्टें बैंक की संपत्ति है और जब भी बैंक को कार्य संबंधी उन सभी कागज़ात की आवश्यकता हो, उसे वे उपलब्ध कराए जाएं।
* बैंक द्वारा प्राधिकृत कर्मचारियों को कार्य-संबंधी कागज़ातों तक उचित और समय पर पहुंचना सुलभ होना चाहिए।
* पर्यवेक्षकों को कार्य-संबंधी संबंधित कागज़ात तत्काल सुलभ कराए जाने चाहिए।

(ख) प्रबंध-तंत्र को इस बात से संतुष्ट रहना चाहिए कि बाहरी व्यवस्था द्वारा गतिविधि को सक्षमता से व्यवस्थित किया जा रहा है।

(ग) विक्रेता द्वारा किया गया सारा कार्य प्रलेखित किया जाए और आंतरिक लेखा-परीक्षा विभाग के माध्यम से उच्च प्रबंध-तंत्र को सूचित किया जाए।

(घ) बाहरी व्यवस्था के अचानक बंद हो जाने के कारण उल्लेखनीय परिचालनगत जोखिमों से बचने के लिए, बैंक के पास लेखा-परीक्षा कवरेज में आई विच्छिन्नता को कम करने के लिए कोई आकस्मिक योजना होनी चाहिए।

जोखिम-आधारित आंतरिक लेखा-परीक्षा से अपेक्षा की जाती है कि बैंक में चल रहे जोखिम प्रबंधन सिस्टम में वह आवश्यक जांच और बैलेंस उपलब्ध कराके उनकी सहायक बने। तथापि, चूंकि जोखिम-आधारित आंतरिक लेखा-परीक्षा अधिकतर भारतीय बैंकों के लिए लगभग नए प्रकार का कार्य होगा अतः इसके कार्यान्वयन के लिए क्रमिक किंतु प्रभावशाली दृष्टिकोण आवश्यक होगा। प्रारंभ में जोखिम-आधारित आंतरिक लेखा-परीक्षा को वर्तमान आन्तरिक लेखा परीक्षा / निरीक्षण के आन्तरिक प्रबंधन लेखा परीक्षा तंत्र के रूप में उपयोग में लाया जाए। एक बार जोखिम-आधारित आंतरिक लेखा-परीक्षा स्थिर हो जाए और स्टाफ इसमें दक्षता प्राप्त कर ले तो इसे वर्तमान आंतरिक लेखा-परीक्षा/निरीक्षण के स्थान पर लागू कर दिया जाए। सूचना प्रणाली लेखा-परीक्षा (आई एस लेखा-परीक्षा) को भी जोखिम-आधारित दृष्टिकोण का उपयोग करते हुए लागू किया जाए।

बैंक वरिष्ठ कार्यपालकों का एक कार्य-दल गठित करें और उन्हें जोखिम-आधारित आंतरिक लेखा-परीक्षा में स्विचओवर करने, संक्रमणकालीन और प्रबंधन संबंधी परिवर्तित मदों की पहचान करने और उन्हें हल करने,योजना को कार्यान्वित करने तथा संक्रमण काल में होने वाली प्रगति की निगरानी करने तथा इसकी सूचना आवधिक रूप से निदेशक-बोर्ड को देने संबंधी कार्य-योजना बनाने की जिम्मेदारी सौंपे।

(संदर्भ : बैपवि. केका.पीपी.बीसी 10/11.01.005/2002-03, दिनांक 27 दिसंबर, 2002)

विदेशी मुद्रा नियंत्रण विभाग

समुद्रपारीय बाज़ार में निवेश

प्राधिकृत व्यापारियों का ध्यान 29 अप्रैल, 2002 के ए.पी. (डी.आई. आर.सिरीज़) परिपत्र सं. 40 के पैरा 3 की मद सं. (प) की ओर

आकृष्ट किया जाता है जिसके अनुसार प्राधिकृत व्यापारियों को एफसीएनआर (आ) की न **अभिनियोजित** निधियों को समुद्रपारीय बाज़ार में दीर्घावधि मीयादी आय वाली प्रतिभूतियों में 24 जनवरी, 2002 के ए.पी(डीआईआर.सिरीज) परिपत्र सं. 19 में नियत योग्यता निर्धारण (रेटिंग) अपेक्षाओं के आधार पर निवेश करने की अनुमति दी गई है ।

अब निर्णय किया गया है कि प्राधिकृत व्यापारी अब एफसीएनआर(आ) की न अभिनियोजित निधियों को समुद्रपारीय बाज़ार में कम से कम, स्टैंडर्ड एण्ड पूअर के श्रेणी AAअथवा मूडीज के श्रेणी Aa3 अथवा Fitch IBCA के श्रेणी AA प्राप्त दीर्घावधि मीयादी आय की प्रतिभूतियों में निवेश कर सकते हैं।

इस परिपत्र में समाहित निदेश विदेशी मुद्रा प्रबंध अधिनियम, 1999 (1999 का 42) की धारा 10(4) और धारा 11(1) के अंतर्गत जारी किए गए हैं ।

(संदर्भ सं. : ए.पी.(डीआईआर.सिरीज़) परिपत्र क्र. 38, दिनांक 2 नवंबर 2002)

अनिवासी भारतीयों / समुद्रपारीय निगमित निकायों द्वारा गैर परिवर्तनीय डिबेंचरों में निवेश-उनका शोधन

प्राधिकृत व्यापारी इस बात से अवगत हैं कि भारतीय कंपनियों को फेरा, 1973 (अब निरस्त) के अंतर्गत अनिवासी भारतीयों / समुद्रपारीय निगमित निकायों को गैर प्रत्यावर्तनीय डिबेंचर जारी करने की अनुमति दी जा रही है । भारतीय कंपनियों को गैर परिवर्तनीय डिबेंचर जारी करने की अनुमति देते समय उन्हें सूचित किया जाता था कि उनकी शोधन आय को प्रत्यावर्तित करते समय रिज़र्व बैंक का पूर्व अनुमोदन प्राप्त किया जाए ।

3 मई, 2000 की अधिसूचना सं. फेमा.4/2000-आरबी के विनियम 5 के अनुसार भारत में निगमित कंपनियों को, भारत से बाहर रह रहे अनिवासी भारतीय अथवा भारतीय मूल के व्यक्तियों अथवा किसी समुद्रपारीय निगमित निकाय (ओसीबी) की, कुछ शर्तों पर, प्रत्यावर्तन अथवा गैर प्रत्यावर्तन आधार पर गैर परिवर्तनीय डिबेंचर जारी करके उनसे रुपये में उधार लेने की सामान्य अनुमति दी गई है ।

यह स्पष्ट किया जाता है कि उक्त विनियम 5 के परिप्रेक्ष्य में भारतीय कंपनियों को जिन्हें फेरा के अंतर्गत शोधन आय के प्रत्यावर्तन के लिए रिज़र्व बैंक का पूर्व अनुमोदन प्राप्त करने की शर्त पर प्रत्यावर्तनीय आधार पर गैर परिवर्तनीय डिबेंचर जारी करने की अनुमति दी गई थी, अबसे उन्हें गैर परिवर्तनीय/आंशिक परिवर्तनीय डिबेंचर की शोधन आय को प्रत्यावर्तित करने के लिए रिज़र्व बैंक के पूर्व अनुमोदन की आवश्यकता नहीं है बशर्ते कि उन्होंने संगत अनुमोदन पत्र में निर्धारित सभी अन्य शर्तों का अनुपालन किया हो ।

इस परिपत्र में समाहित निदेश विदेशी मुद्रा प्रबंध अधिनियम, 1999 (1999 का 42) की धारा 10(4) और धारा 11(1) के अंतर्गत जारी किए गए हैं ।

(संदर्भ सं : ए.पी(डीआईआर.सिरीज़) परिपत्र क्र. 39 दिनांक 5 नवंबर, 2002)

बिड बॉंड गारंटी के बदले कार्पोरेट गारंटी का निर्गम

प्राधिकृत व्यापारियों का ध्यान 3 मई 2000 की अधिसूचना फेमा सं. 8/2000-आरबी के विनियम 5 की ओर आकृष्ट किया जाता है जिसके अनुसार प्राधिकृत व्यापारियों से भिन्न कोई भी व्यक्ति कुछ किस्म के मामलों में गारंटी देने के लिए अनुमत है।

रिज़र्व बैंक ने उक्त अधिसूचना को संशोधित करते हुए 18 मार्च 2002 को अधिसूचना सं. फेमा. 56/2002-आरबी जारी की है जिसमें विदेश में परियोजनाओं के निष्पादन के लिए, सेवा संविदा समेत, कुछ शर्तों के तहत बिड बॉंड गारंटी के बदले कार्पोरेट गारंटी जारी करने की अनुमति दी गई बशर्ते कि ऐसी गारंटी की रकम संविदा मूल्य के 5 प्रतिशत से अधिक न हो। परंतु, निर्यातकों को सुनिश्चित करना होगा कि पीईएम ज्ञापन में समाहित प्रावधान और बोली लगाने के लिए समय-समय पर रिज़र्व बैंक द्वारा जारी अनुदेशों का पालन किया जाए।

18 मार्च, 2002 की अधिसूचना सं. फेमा. 56/2002-आरबी के अनुसार 3 मई, 2000 की अधिसूचना सं. फेमा - 8/2000-आरबी में यथावश्यक संशोधन किया जाए।

इस परिपत्र में समाहित निदेश विदेशी मुद्रा प्रबंध अधिनियम, 1999 (1999 का 42) की धारा 10(4) और धारा 11(1) के अंतर्गत किए गए हैं।

(संदर्भ सं : ए.पी. (डीआईआर सिरीज़) परिपत्र क्र. 41 दिनांक 8 नवंबर, 2002)

विदेशी मुद्रा प्रबंध अधिनियम 1999-आयात के लिए अग्रिम प्रेषण

प्राधिकृत व्यापारियों का ध्यान 24 अगस्त 2000 के ए.पी. (डीआईआर सिरीज़) परिपत्र क्र. 9 के परिशिष्ट के पैरा अ. 11 की ओर आकृष्ट किया जाता है जिसके अनुसार प्राधिकृत व्यापारियों

को मालों के आयात के लिए अग्रिम प्रेषण करने की अनुमति दी गई है। उक्त पैराग्राफ के उप पैरा (ग) के अनुसार यदि अग्रिम प्रेषण की रकम 25,000 अमरीकी डॉलर अथवा उसके समतुल्य से अधिक है तो उसके लिए बैंक गारंटी की आवश्यकता होगी।

आयात की प्रक्रिया को अधिक सरल और उदार बनाने के दृष्टिकोण से 25,000 अमरीकी डॉलर की सीमा को बढ़ाकर 1,00,000 अमरीकी डॉलर अथवा उसके समतुल्य करने का निर्णय किया गया है । अतः प्राधिकृत व्यापारी 1,00,000 अमरीकी डॉलर के आयात के लिए अग्रिम प्रेषण, रिजर्व बैंक के पूर्व अनुमोदन के बिना भेजने की अनुमति दे सकते हैं ।

यदि आयातक अग्रिम प्रेषण की तारीख से, निर्धारित समय (परिपत्र के अ.11(घ) के अनुसार प्राधिकृत व्यापारियों द्वारा बढ़ाई जाने वाली अवधि समेत) के भीतर माल का आयात असफल रहता है तो आयातक को प्रेषित की गई राशि को अविलंब प्रत्यावर्तित करना होगा। परिपत्र के पैरा अ.11 में विहित अन्य शर्तें अपरिवर्तित रहेंगी ।

इस परिपत्र में समाहित निदेश विदेशी मुद्रा प्रबंध अधिनियम, 1999 (1999 का 42) की धारा 10(4) और धारा 11(1) के अंतर्गत जारी किए गए हैं।

(संदर्भ सं : ए.पी.(डीआईआर सिरीज़) परिपत्र क्र. 49, दिनांक 16 नवंबर, 2002)

विदेश की निजी यात्रा के लिए विदेशी मुद्रा में वृद्धि

भारत सरकार के 3 मई, 2000 की अधिसूचना सं. जीएसआर. 381(E) की अनुसूची III की मद संख्या 2 के अनुसार प्राधिकृत व्यक्तियों को कैंलेंडर वर्ष में किसी देश (नेपाल और भूटान के सिवाय) की एक या अनेक यात्राओं के लिए 5,000 अमरीकी डॉलर से अधिक की मुद्रा देने से पहले रिज़र्व बैंक का पूर्व अनुमोदन लेना पड़ता है।

और अधिक उदारीकरण के दृष्टिकोण से उक्त सीमा बढ़ाकर 10,000 अमरीकी डॉलर अथवा उसके समतुल्य कर दी गई है। इससे अधिक की विदेशी मुद्रा के लिए रिज़र्व बैंक के संबंधित क्षेत्रीय कार्यालय को प्राधिकृत व्यक्ति के माध्यम से आवेदन प्रस्तुत किया जाए।

इस परिपत्र में समाहित निदेश विदेशी मुद्रा प्रबंध अधिनियम, 1999 (1999 का 42) की धारा 10(4) और धारा 11(1) के अंतर्गत जारी किए गए हैं।

(संदर्भ : ए.पी. (डीआईआर. सिरीज़) परिपत्र क्र. 51, ए.पी. (एफ़एलआरएल सिरीज़) परिपत्र क्र. 2 दिनांक 18 नवंबर, 2002)

अनिवासी भारतीयों (एनआरआई) / भारतीय मूल के व्यक्तियों (पीआईओ) को अंतर्राष्ट्रीय क्रेडिट कार्ड जारी करना

प्राधिकृत व्यापारियों का ध्यान अंतरराष्ट्रीय क्रेडिट कार्ड से संबंधित 27 जून, 2002 के ए.पी. (डीआईआर. सिरीज़) परिपत्र क्र. 53 और बाद में स्पष्टीकरण के लिए जारी 5 नवंबर, 2002 के ए.पी. (डीआइआर सिरीज़) परिपत्र क्र. 40 की ओर आकृष्ट किया जाता है।

मौजूदा अनुदेशों के अनुसार एनआरआई / पीआईओ से अपेक्षित है कि अंतरराष्ट्रीय क्रेडिट कार्ड के उपयोग के व्यय की रकम का भुगतान केवल आवक प्रेषणों अथवा अनिवासी बाह्य (एनआरआई) रुपए खाते / विदेशी मुद्रा अनिवासी (बैंक) (एफसीएनआर) खाते में धारित रकम से किया जाए। समीक्षा के पश्चात् निर्णय किया गया है कि क्रेडिट कार्डों की देयता का भुगतान अनिवासी (साधारण) रुपये खाते (एनआरओ) में धारित रकम से भी किया जा सकता है। तदनुसार, प्राधिकृत व्यापारी अपने अनिवासी एनआरआई / पीआईओ ग्राहकों को बैंक द्वारा भारत में जारी क्रेडिट कार्ड की सीमा तक के इस्तेमाल की रकम को एनआरओ खातों में नामे डालने की अनुमति दें। वह नामे निवासियों द्वारा अंतर्राष्ट्रीय क्रेडिट कार्ड के इस्तेमाल के लिए नियत अन्य शर्तों के भी अधीन होगा।

विदेशी मुद्रा प्रबंध (जमा) विनियमावली 2000 में आवश्यक संशोधन अलग से अधिसूचित किए जा रहे हैं।

इस परिपत्र में समाहित निदेश विदेशी मुद्रा प्रबंध अधिनियम, 1999 (1999 की 42) की धारा 10(4) और धारा 11(1) के अंतर्गत जारी किए गए हैं।

(संदर्भ सं. : ए.पी.(डीआईआर. सिरीज़) परिपत्र क्र. 59 दिनांक 9 दिसंबर 2002)

जमा योजनाओं की पूर्ण परिवर्तनीयता - एनआरएनआर / एनआरएसआर खाते - स्पष्टीकरण

प्राधिकृत व्यापारियों का ध्यान 4 मार्च, 2002 के ए.पी. (डीआईआर. सिरीज़) परिपत्र क्र. 28 और इस विषय में समय-समय पर जारी स्पष्टीकरण की ओर आकृष्ट किया जाता है।

जमा योजनाओं के कार्यकारी पहलुओं से संबंधित प्राधिकृत व्यापारियों के प्रश्नों के बारे में हमारा स्पष्टीकरण इस प्रकार है :

i) **अतिदेय** एनआरएनआर जमा का नवीकरण

चूंकि प्राधिकृत व्यापारी एनआरएनआर योजना के अंतर्गत 1 अप्रैल, 2002 से नवीकरण अथवा अन्य किसी प्रकार से कोई नई

जमा राशि नहीं स्वीकार कर सकते हैं इसलिए अतिदेय एनआरएनआर जमा नवीकृत नहीं की जानी चाहिए। यदि परिपक्व अथवा अतिदेय एनआरएनआर जमा 1 अप्रैल, 2002 के बाद नवीकरण के लिए प्रस्तुत की जाती है तो वह जमा धारक के एनआरई खाते में प्रस्तुत करने की तारीख को जमा कर दी जाए।

ii) <u>परिपक्व एनआरएनआर ज़मा को एनआरई खाते में और उनके बाद एफसीएनआर (आ) खाते में जमा करना</u>

एनआरएनआर जमा की परिपक्व रकम जो एनआरई खाते में जमा की गई है बाद में एफसीएनआर (आ) खाते में 3 मई, 2000 की भारतीय रिज़र्व बैंक की अधिसूचना सं. फेमा. 5/2000-आरबी की अनुसूची 1 के पैरा 4(ग) के अनुसार अंतरित की जा सकती है।

iii) <u>एनआरएनआर खातों की परिपक्व आय का प्रत्यावर्तन</u>

यदि एनआरएनआर जमाकर्ता एनआरई खाताधारी नहीं है तो उसे एनआरएनआर जमा की परिपक्वता आय को भारत से बाहर प्रत्यावर्तित करने की अनुमति दी जा सकती है।

iv) <u>परिपक्व एनआरएनआर जमा को आरएफसी खाते में जमा करना</u>

अब निवासी हो चुके एनआरएनआर जमाधारकों की, 1 अप्रैल, 2002 अथवा उसके बाद परिपक्व होने वाली एनआरएनआर जमाराशि उनके आरएफसी खाते में जमा की जा सकती है।

इस परिपत्र में समाहित निदेश विदेशी मुद्रा प्रबंध अधिनियम, 1999 (1999 का 42) की धारा 10(4) और धारा 11(1) के अंतर्गत जारी किए गए हैं।

(संदर्भ : सं.ए.पी.(डीआईआर सिरीज़) परिपत्र क्र. 60, दिनांक 10 दिसंबर 2002)

निवासी विदेशी मुद्रा (घरेलू) खाता -

निवासी व्यक्तियों के लिए सुविधा

प्राधिकृत व्यापारियों का ध्यान 23 नवंबर, 2002 के ए.पी.(डीआईआर सिरीज़) परिपत्र सं. 53 और 1 नवंबर, 2002 की अधिसूचना सं. फेमा. 74/2002-आरबी की ओर आकृष्ट किया जाता है जिसके अनुसार निवासियों को विनिर्दिष्ट प्रयोजनों के लिए भारत के प्राधिकृत व्यापारी के पास करेंसी नोट, बैंक नोट और यात्री चेकों के रूप में अभिग्रहीत विदेशी मुद्रा से विदेशी मुद्रा (घरेलू) खाता खोलने, धारित करने और अनुरक्षित करने की अनुमति है।

अब निर्णय किया गया है कि उक्त अधिसूचना में उल्लिखित प्रयोजनों और स्वरूपों के अलावा, निवासी व्यक्ति अपनी अर्जित विदेशी मुद्रा और / अथवा अपने घनिष्ट रिश्तेदारों (जैसा कि कंपनी अधिनियम में परिभाषित) से सामान्य बैंकिंग मार्ग से भारत में प्राप्त उपहारों की विदेशी मुद्रा को अपने निवासी विदेशी मुद्रा (घरेलू) खाते में जमा कर सकते हैं / उससे खाता खोल सकते हैं। विदेशी मुद्रा का अर्जन माल के निर्यात और / अथवा सेवाओं, रॉयल्टी, मानदेय आदि द्वारा हो सकता है।

1 नवंबर, 2002 की अधिसूचना सं. फेमा.74/2002-आरबी में आवश्यक संशोधन अलग से जारी किए जा रहे हैं।

इस परिपत्र में समाहित निदेश विदेशी मुद्रा प्रबंध अधिनियम, 1999 (1999 का 42) की धारा 10(4) और धारा 11(1) के अंतर्गत जारी किए गए हैं।

(संदर्भ सं. : ए.पी.(डीआईआर सिरीज़) परिपत्र क्र. 64, दिनांक 24 दिसंबर, 2002)

विदेशी मुद्रा प्रबंध अधिनियम 1999 -

दी जाने वाली सेवाओं के लिए अग्रिम प्रेषण

प्राधिकृत व्यापारियों का ध्यान 30 अक्तूबर, 2000 के ए.पी.(डीआईआर सिरीज़) परिपत्र क्र. 19 के पैरा 5 की ओर आकृष्ट किया जाता है जिसके अनुसार प्राधिकृत व्यापारी को 25,000 अमरीकी डॉलर अथवा उसके समतुल्य से अधिक चालू खाता लेनदेन से संबंधित अग्रिम प्रेषणों के लिए भारत से बाहर स्थित अंतरराष्ट्रीय ख्याति के किसी बैंक की गारंटी अथवा यदि ऐसी गारंटी भारत से बाहर स्थित अंतरराष्ट्रीय ख्याति के किसी बैंक की गारंटी पर काउंटर गारंटी जारी की गई हो तो भारत में किसी प्राधिकृत व्यापारी से गारंटी लेना पड़ता है।

सेवाओं के आयात की प्रक्रिया को और अधिक उदार बनाने के विचार से 25,000 अमरीकी डॉलर की सीमा को बढ़ाकर 1,00,000 अमरीकी डॉलर अथवा उसके समतुल्य करने का निर्णय किया गया है। तदनुसार, प्राधिकृत व्यापारी अब से 1,00,000 अमरीकी डॉलर तक सभी स्वीकार्य चालू खाता लेनदेन के लिए रिज़र्व बैंक की पूर्व अनुमति के बिना अग्रिम प्रेषण की अनुमति दे सकते हैं।

यदि अग्रिम रकम 1,00,000 अमरीकी डॉलर अथवा उसके समतुल्य रकम से अधिक हो तो भारत से बाहर स्थित अंतरराष्ट्रीय ख्याति के किसी बैंक की गारंटी अथवा भारत में किसी प्राधिकृत

व्यापारी से, यदि गारंटी भारत से बाहर स्थित किसी अंतरराष्ट्रीय ख्याति बैंक की गारंटी के लिए काउंटर गारंटी के रूप में जारी की गई हो तो, समुद्रपारीय हिताधिकारी से गारंटी प्राप्त की जाए।

प्राधिकृत व्यापारी भी, हिताधिकारी द्वारा भारत में प्रेषक के साथ किए गए अग्रिम प्रेषण से संबंधित संविदा अथवा करार के अंतर्गत अपने दायित्व को पूरा करना सुनिश्चित करने और यदि वे ऐसा करने में असफल होते हैं तो रकम भारत में प्रत्यावर्तित की जाए इसका अनुवर्तन करें।

इस परिपत्र में समाहित निदेश विदेशी मुद्रा प्रबंध अधिनियम, 1999 (1999 का 42) की धारा 10(4) और धारा 11(1) के अंतर्गत जारी किए गए हैं।

(संदर्भ सं. : ए.पी.(डीआईआर सिरीज़) परिपत्र क्र. 65, दिनांक 6 जनवरी, 2003)

ग्रामीण आयोजना और ऋण विभाग

सूखे से प्रभावित क्षेत्रों में बैंकों द्वारा राहत कार्य के लिए दिशानिर्देश

भारत सरकार के परामर्श पर यह निर्णय लिया गया है कि दक्षिण-पश्चिम मानसून न होने के कारण प्रभावित राज्यों में चालू वित्तीय वर्ष के दौरान ब्याज सहित फसल ऋणों की वसूली न की जाए।

तदनुसार, खरीफ 2002-03 के लिए राज्य सरकारों द्वारा अधिसूचित ज़िलों में, सूखे से प्रभावित किसानों को वाणिज्य बैंकों द्वारा निम्नानुसार राहत प्रदान की जाए :

i) खरीफ फसल ऋण के संबंध में चालू वित्तीय वर्ष के दौरान मूलधन और ब्याज के रुप में किसी भी राशि की वसूली नहीं की जानी चाहिए।

ii) फसल ऋण के मूलधन को मीयादी ऋण के रुप में परिवर्तित कर दिया जाना चाहिए तथा उसकी वसूली छोटे और **सीमान्त** किसानों से न्यूनतम 5 वर्ष की अवधि में तथा अन्य किसानों से 4 वर्ष की अवधि में वसूल की जाए। (वर्तमान दिशानिर्देशों में 3 वर्ष की निर्धारित अवधि के स्थान पर)

iii) फसल ऋण पर चालू वित्तीय वर्ष में देय ब्याज भी आस्थगित कर दिया जाए। आस्थगित ब्याज पर ब्याज प्रभारित नहीं किया जाना चाहिए।

इस संबंध में, हम उपर्युक्त विषय पर 3 अगस्त 2002 के अपने परिपत्र ग्राआऋवि.सं.पीएलएफएस.बीसी.2/05.04.02/2002-03 के संदर्भ में आपका ध्यान आकृष्ट करते हैं तथा सूचित करते हैं कि 20 जून 1998 के परिपत्र ग्राआऋवि.सं.पीएलएफएस.बीसी.128/05.04.02/97-98 के साथ पठित 2 अगस्त 1984 के परिपत्र ग्राआऋवि.सं.पीएस.बीसी.6/पीएस.126-84 के अन्तर्गत परिचालित दिशानिर्देशों में विहित अनुदेश अपरिवर्तित रहेंगे।

(संदर्भ सं. : ग्राआऋवि.सं.पीएलएफएस.बीसी.46/05.04.02 (सूखा) / 2002-03, दिनांक 15 नवंबर, 2002)

शहरी बैंक विभाग

बैंकों का तुलन पत्र - सूचना का प्रकटन

बैंककारी विनियमन अधिनियम, 1949 (सहकारी सोसायटियों को यथा लागू) की धारा 29 के अनुसार प्रत्येक बैंक के लिए प्रत्येक वर्ष के अंतिम कार्य दिवस, अर्थात् 31 मार्च को उसके द्वारा किए गए सभी व्यवसाय के संबंध में एक तुलन पत्र एवं लाभ-हानि लेखा तैयार करना आवश्यक है। इस संबंध में 100 करोड़ रुपये या उससे अधिक जमाराशियों वाले प्राथमिक (शहरी) सहकारी बैंकों के लिए कुछ प्रकटन मानकों को लागू करने का निर्णय लिया गया है। तदनुसार, 100 करोड़ रुपये या उससे अधिक जमाराशि वाले शहरी सहकारी बैंक 31 मार्च 2000 को समाप्त होने वाले वर्ष से अपने तुलन पत्र में निम्नलिखित जानकारी लेखाओं पर टिप्पणियों के रूप में प्रकट करेंगे।

i) पूंजी - जोखिम आस्ति अनुपात (सीआरएआर)

इसका परिकलन 25 अप्रैल 2001 के शबैंवि. परिपत्र पॉट.पीसीबी.सं. 45/09.116.00/2000-01 में दिए गए दिशानिर्देशों के अनुसार किया जाए।

ii) पूंजी - जोखिम अनुपात में परिवर्तन

(अर्थात् गत वर्ष के तुलन पत्र की तिथि की तुलना में चालू वर्ष के लिए तुलन पत्र की तिथि को पूंजी - जोखिम आस्ति अनुपात में परिवर्तन-यथा 31 मार्च 2002 की तुलना में 31 मार्च 2003 की स्थिति)

iii) निवेश

क) निवेशों का बही मूल्य व अंकित मूल्य

ख) निवेशों का बाज़ार मूल्य

iv) स्थावर संपदा की जमानत पर तथा भवन निर्माण व्यवसाय एवं आवास हेतु अग्रिम

v) शेयरों एवं डिबेंचरों की जमानत पर अग्रिम

vi) निदेशकों, उनके रिश्तेदारों, कंपनियों / फर्मों, जिनमें उनका हित हो, के लिए अग्रिम

क) निधि आधारित

ख) गैर-निधि आधारित (गारंटियां / साख पत्र आदि)

vii) जमाराशियों की लागत

जमाराशियों की औसत लागत

viii) अनर्जक आस्तियां (एनपीए)

क) सकल अनर्जक आस्तियां

ख) निवल अनर्जक आस्तियां

ix) अनर्जक आस्तियों में परिवर्तन

(अर्थात गत वर्ष के तुलन पत्र की तिथि की तुलना में चालू वर्ष के लिए तुलन पत्र की तिथि को सकल एवं निवल अनर्जक आस्तियों में परिवर्तन - यथा 31 मार्च 2002 की तुलना में 31 मार्च 2003 की स्थिति)। धारित प्रावधानों, ब्याज, उचंत, लेखा आदि की कटौती करने के बाद निवल एनपीए का हिसाब लगाया जाए।

x) लाभप्रदता

क) कार्यशील निधियों के प्रतिशत के रूप में ब्याज आय

ख) कार्यशील निधियों के प्रतिशत के रूप में ब्याजेतर आय

ग) कार्यशील निधियों के प्रतिशत के रूप में परिचालनगत लाभ

घ) आस्तियों पर प्रतिफल

ङ) प्रति कर्मचारी व्यवसाय (जमाराशियां + अग्रिम)

च) प्रति कर्मचारी लाभ

xi) अनर्जक आस्तियों, निवेशों में मूल्य ह्रास के लिए किए गए प्रावधान

xii) प्रावधानों में परिवर्तन

अर्थात गत वर्ष की तुलना में वर्तमान वर्ष के लिए तुलन पत्र की तारीख को किया गया प्रावधान। उदा. 31 मार्च 2003 और 31 मार्च 2002 की स्थिति के अनुसार प्रावधान :

क) अनर्जक आस्तियों के लिए

ख) निवेशों पर मूल्यह्रास के लिए

ग) मानक आस्तियों के लिए

xiii) विदेशी मुद्रा आस्तियां और देयताएँ (यदि लागू हों)

(संदर्भ सं.: शबैंवि.केंका.बीपीपीसीबी.20/16.45.00/2002-03 दिनांक 30 अक्तूबर, 2002)

भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम, 1934 - दैनिक न्यूनतम आरक्षित नगदी निधि बनाए रखने की अपेक्षाओं में छूट

कृपया उपर्युक्त विषय पर 29 अक्तूबर 2002 का परिपत्र सं. शबैंवि.बीआर. 6/16.11.00/2002-2003 देखें।

जैसा कि उक्त पैरा में उल्लेख किया गया है, वर्तमान में बैंकों के लिए एक पखवाड़े के दौरान दैनिक आधार पर अपेक्षित नगदी निधि अनुपात का न्यूनतम 80 प्रतिशत बनाए रखना आवश्यक है जो सूचना देने के लिए नियत पखवाड़े के सभी दिनों पर लागू है। बैंकों को अपने अंतरावधिक नगदी प्रवाह के आधार पर आरक्षित निधि रखने की इष्टतम रणनीति का चुनाव करने में लचीलापन प्रदान करने की दृष्टि से यह निर्णय किया गया है कि आरक्षित नकदी निधि अनुपात शेष के न्यूनतम 80 प्रतिशत की वर्तमान अपेक्षाओं को कम करके 28 दिसंबर 2002 से प्रारंभ पखवाड़े से 70 प्रतिशत तक बनाए रखा जाए।

(संदर्भ सं. : शबैंवि.रिट.8/16.11.00/2002-2003, 27 दिसंबर, 2002)

प्रयुक्त शब्दावली

स्वयं सहायता समूह	Self help group	मध्यावधि	Mid - term
गैर जमानती गारंटी	Unsecured Gurantee	अस्थिर (चल) दर	Floating rate
विवेकपूर्ण मानदंड	Prudential norms	गैर निधि आधारित सीमाएं	Non-fund based limits
वसूली कार्य-निष्पादन	Recovery performance	मूल जोखिम पद्धति	Original exposure method

चालू जोखिम पद्धति	Current exposure method	सुपरिभाषित नीति	Well defined policy
शेष अवधि पूर्णता	Residual maturity	बारंबारता	Frequency
चरणबद्ध रूप में	In phased manner	समुद्रपारीय	Overseas
कार्य दल	Task force	अभिनियोजित	Deployed
कार्य योजना	Action plan	गैर परिवर्तनीय	Non convertible
संक्रमण कालीन अवधि	Transitional period	अतिदेय	Overdue
		सीमान्त	Marginal

बैंकिंग चिंतन-अनुचिंतन

के स्वामित्व और अन्य ब्यौरों का विवरण

फार्म - IV

1. प्रकाशन का स्थान	: मुंबई
2. प्रकाशन की अवधि	: तिमाही
3. सम्पादक, प्रकाशक का नाम	: सी. आर. गोपालसुंदरम
राष्ट्रीयता	: भारतीय
पता	: बैंकर प्रशिक्षण महाविद्यालय, भारतीय रिज़र्व बैंक, वीर सावरकर मार्ग, दादर, मुंबई - 400 028.
4. उन व्यक्तियों के नाम और पते जो पत्र के मालिक हैं	: बैंकर प्रशिक्षण महाविद्यालय, भारतीय रिज़र्व बैंक, वीर सावरकर मार्ग, दादर, मुंबई - 400 028.

मैं, सी. आर. गोपालसुंदरम, एतद्द्वारा यह घोषणा करता हूं कि उपर्युक्त विवरण मेरी जानकारी और विश्वास के अनुसार सत्य है ।

दिनांक : 31 मार्च 2003

ह /-
सी. आर. गोपालसुंदरम
प्रकाशक

पुस्तक का नाम	:	**कम्प्यूटर प्रयोग और हिन्दी**
लेखक का नाम	:	डॉ. अमरसिंह वधान
प्रकाशक	:	भावना प्रकाशन, दिल्ली - 110 091
पुस्तक पृष्ठ	:	184
पुस्तक मूल्य	:	200/- रुपये
प्रथम संस्करण	:	2003

कम्प्यूटर के युग में हिन्दी की चिन्ता वर्तमान परिस्थितियों में एक स्वाभाविक प्रक्रिया है जो स्वयं ही प्रश्न पैदा करती है और स्वयं ही अपना समाधान भी प्रस्तुत करती है । इसी प्रक्रिया में एक कड़ी के रूप में डा.अमरसिंह वधान की हाल ही में प्रकाशित पुस्तक "कम्प्यूटर प्रयोग और हिन्दी" अपनी सम्पूर्णता के साथ कई प्रश्न लेकर पाठकों के बीच आई है । भारत में, कम्प्यूटर का आगमन 60 के दशक में हुआ और एक खौफ की तरह उभरा क्योंकि भारतीय भाषाओं के कार्यकर्ताओं में अपनी-अपनी भाषा को लेकर चिन्ता व्याप्त होने लगी । इस पुस्तक में प्रारंभिक स्तर पर ही उस तथाकथित "चिन्ता" को सही परिप्रेक्ष्य में समझाते हुए उसी में निहित समाधान को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है और यह प्रयास इस सिद्धांत पर आधारित है कि कम्प्यूटर की कोई लिपिगत भाषा नहीं होती बल्कि वह तो केवल शून्य और एक की ही भाषा समझता है । वस्तुतः कम्प्यूटर के लिए तमिल, हिन्दी, रोमन या अन्य कोई भी भाषा समस्या है ही नहीं ।

पुस्तक को 20-22 अध्यायों में, सुविधानुसार, प्रस्तुत किया गया है और कम्प्यूटर से जुड़े विभिन्न आयामों को शामिल भी किया गया है। परन्तु, पुस्तक कोई दिशा नहीं पकड़ पायी क्योंकि विषय की व्यापकता होने के कारण पाठक को केवल परिचयात्मक दृष्टिकोण ही मिल पाता है । वास्तव में देखा जाए तो पुस्तक "सूचनापरक" है सिद्धांत या समाधान परक नहीं । लेखक ने "सूचनापरक" पुस्तक में अपनी पूरी ईमानदारी से अपने विचारों को समेटा है और परिस्थितियों का सही-सही प्रतिपादन किया है । इस प्रक्रिया में कुछ सुझाव बड़ी सहजता से उभरकर सामने आये हैं जो आनेवाले समय में कार्यान्वयन करने पर लाभदायक भी सिद्ध हो सकते हैं । कम्प्यूटर के माध्यम से किसी भी भाषा के प्रयोग के सन्दर्भ में, उस भाषा का मानकीकरण, शब्दावली और कुंजी पटल का मानकीकरण, देवनागरी में डायनामिक/यूनिकोड फॉन्ट का विकास, बैंकों के सन्दर्भ में डाटा संसाधन में एकरुपता का निर्धारण, कम्प्यूटर अनुवाद की दिशा में निरंतर अनुसंधान और कार्य आदि कुछ ऐसे सुझाव हैं जो भविष्य में समाधान दे सकते हैं । चूंकि लेखक बैंक में हिन्दी से स्वयं जुड़े हैं अतः उनकी दृष्टि उन तमाम समस्याओं की तरफ गई है जो आज सभी बैंकवाले महसूस कर रहे हैं ।

समीक्षाधीन पुस्तक को यदि गहराई से पढ़ा जाए तो यह एहसास भी होता है कि आप एक साथ दो पुस्तकें पढ़ रहे हैं, पहली कम्प्यूटर प्रयोग की और दूसरी हिन्दी (कामकाज की भाषा) की । एक तरफ जहाँ कम्प्यूटर और हिन्दी के समामेलन की चर्चा हो रही है वहीं दूसरी तरफ भाषा को लेकर चिन्ता व्यक्त की जा रही है । कुछ

अध्याय न कम्प्यूटर से जुड़े हैं और न भाषा से बल्कि सामान्य प्रबंधकीय भूमिका की बात करते हैं जैसे कि सूचना और सम्प्रेषण, कम्प्यूटर प्रशिक्षक की भूमिका आदि । फिर भी, पुस्तक के अंत में दी गयी शब्दावली और कम्प्यूटर संकेताक्षर अपनी उपयोगिता सिद्ध करते हैं ।

जटिल विचारों को समझने एवं उन्हें किसी एक कड़ी में जोड़ने के लिये सहज भाषा का होना पहली शर्त होती है और इस शर्त पर यह पुस्तक खरी उतरती है । डॉ. वधान ने बोलचाल की प्रवाहमय भाषा में अपनी बात रखी है, समझायी है और वे इसमें सफल भी हुए हैं । अपने विचारों को भूमि देने के लिए उन्होंने विषय से जुड़ी तमाम जानकारियां हासिल की हैं और उन्हें सन्दर्भ में रखते हुए अपनी कही है, यह बात पुस्तक में स्पष्ट रूप से सामने आती है ।

भाषा के चिन्तक और कम्प्यूटर को लेकर अपनी भाषा के संबंध में सोचने वाले इस पुस्तक को अपनी सोच एवं चिन्तन के साथ जोड़कर एक दिशा तय कर पायेंगे । यह पुस्तक नीति निर्धारकों को भी बार-बार यह संकेत देती है कि भाषा को लेकर एक ठोस, स्पष्ट नीति होनी चाहिए क्योंकि लेखक यह मानता है कि ''एक स्पष्ट व स्थिर राजभाषा नीति, कार्यान्वयन में ईमानदारी और पारदर्शिता, कार्यालयीन अनिवार्यता, मिशन प्रवृत्ति, स्वतंत्र मानसिकता, भाषाई सुदृढ़ता एवं सहयोगात्मक कार्य वातावरण द्वारा ही हिन्दी को एक मजबूत आधार दिया जा सकता है ।''

पुष्पकुमार शर्मा
सहायक महा प्रबंधक (राजभाषा)
बैंकर प्रशिक्षण महाविद्यालय
भारतीय रिज़र्व बैंक
मुंबई

पुस्तक का नाम	:	**भारतीय अर्थव्यवस्था**
लेखक का नाम	:	एस. के. मिश्र एवं वी. के. पुरी
प्रकाशक	:	हिमालया पब्लिशिंग हाउस
पुस्तक पृष्ठ	:	713
पुस्तक मूल्य	:	240/- रुपये
संस्करण	:	चौदहवाँ (2002)

यह पुस्तक विभिन्न विश्वविद्यालयों के अर्थशास्त्र के विद्यार्थियों, शोधकर्ताओं तथा अध्यापकों को भारतीय अर्थव्यवस्था से संबद्ध विविध क्षेत्रों की जानकारी देने के उद्देश्य से लिखी गई है । लेखकों ने यह भी कहा है कि प्रशासनिक एवं अन्य परीक्षाओं के परीक्षार्थी भी इस पुस्तक से पर्याप्त लाभान्वित होंगे । यह पुस्तक अंग्रेजी में सन् 1983 से ही बाजार में उपलब्ध है तथा इसके कई संस्करण निकल चुके हैं । समीक्षाधीन पुस्तक इसके हिन्दी रूपांतर का चौदहवाँ संस्करण है ।

यह पुस्तक 7 भागों में विभाजित है जिसमें आर्थिक संवृद्धि और विकास, भारतीय अर्थव्यवस्था की संरचना, आर्थिक आयोजन तथा विकास, कृषि क्षेत्र का विकास व कृषि से संबंधित समस्याएँ, भारत का औद्योगिक विकास, विदेशी व्यापार एवं परिवहन तथा मुद्रा, बैंकिंग और लोकवित्त पर सविस्तार चर्चा की गई है । इन 7 भागों में विभाजित की गई सामग्री को सुविधा हेतु कुल 54 अध्यायों में व्यवस्थित करके रखा गया है । इसमें भारतीय अर्थव्यवस्था के सभी संभाव्य पहलुओं को शामिल करने का प्रयास परिलक्षित होता है । पुस्तक में कुल 713 पृष्ठ हैं ।

बीसवीं शताब्दी के अंतिम दशक के आरंभिक चरण में भारतीय अर्थव्यवस्था के समक्ष विद्यमान गंभीर चुनौतियों एवं संकट की पृष्ठभूमि में, तथा उदारीकरण व सार्वभौमीकरण के चलते अत्यन्त तीव्रगति से बदलते परिदृश्य ने बैंकिंग व्यवस्था के गहन अध्ययन व विश्लेषण की नव-प्रेरणा दी । सरकार की कोटा, परमिट और इंस्पेक्टर राज खत्म करने की इच्छा के परिप्रेक्ष्य में व्यापार-व्यवस्था के विनियंत्रण तथा अर्थव्यवस्था के सार्वभौमीकरण को दृष्टिगत रखते हुए इस विषय की विविधता व व्यापकता की अनंत संभावनाएँ बनीं । इन तमाम

समस्याओं का अध्ययन करने के जिज्ञासुओं के लिए यह पुस्तक वास्तव में अत्यंत उपयोगी व बृहद् संदर्भ ग्रंथ है। प्रत्येक अध्याय में विवेचित सामग्री को तर्कसंगत रूप से तथा विश्लेषणात्मक पृष्ठभूमि के साथ प्रस्तुत करने की चेष्टा की गई है। इस दृष्टि से यह पुस्तक बाजार में उपलब्ध अधिकतर अन्य पुस्तकों से बहुत अधिक उपयोगी है, ऐसा कहने में मुझे कोई संकोच नहीं है। पुस्तक में विवेचित विषयों पर अंग्रेजी में अनेक अच्छी पुस्तकें बाजार में उपलब्ध हैं लेकिन हिन्दी में ऐसी पुस्तकों की संख्या अत्यंत सीमित है । इस दृष्टि से लेखकगण का प्रयास अत्यंत सराहनीय है।

इस पुस्तक में शामिल किए गए सभी अध्याय निर्विवाद रूप से अत्यंत उपयोगी हैं; तथापि इसमें कृषि तथा विश्व व्यापार समझौता, नई आर्थिक नीति और 1991 की नई औद्योगिक नीति तथा उनकी वर्ष 2001 तक की समीक्षा, भारत में सार्वजनिक क्षेत्र और उसके निजीकरण का प्रश्न, नब्बे के दशक में भारत के विदेशी व्यापार की संवृद्धि एवं संरचना, बैंकिंग व वित्तीय क्षेत्र के सुधारों इत्यादि पर विस्तृत सामग्री शामिल किए जाने के कारण इसकी उपयोगिता और भी बढ़ गई है । पुस्तक के अध्याय 21 (विश्व व्यापार संगठन और भारतीय कृषि) के अंतर्गत ''कृषि पर समझौते'' की विशेषताओं की चर्चा की गई है तथा यह बताया गया है कि यह समझौता किस प्रकार विकासशील देशों के हितों के विरूद्ध है । इस विषय का अध्ययन करने के जिज्ञासु यह अंश विशेष रूप से देख सकते हैं ।

पुस्तक में, 31 मार्च 2002 को समाप्त हुई नौवीं पंचवर्षीय योजना की अवधि में देश की आर्थिक व औद्योगिक संवृद्धि, कृषि तथा निर्यात क्षेत्र के निष्पादन, बेरोजगारी में वृद्धि व गरीबी की स्थिति का आकलन इत्यादि ऐसे विषय शामिल किए गए हैं जो भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए सदैव प्रासंगिक बने रहेंगे। पुस्तक में इन अंशों का विवेचन संगत एवं विश्लेषणात्मक तर्कों पर आधारित है और इनके अध्ययन से भारतीय अर्थव्यवस्था के कई अनसुलझे प्रश्नों की पाठकों को जानकारी मिलेगी । यह पुस्तक दसवीं पंचवर्षीय योजना के समक्ष उपस्थित चुनौतियों का भी आभास देती है । पुस्तक में विविध विषयों पर वर्ष 2001-2002 तक की स्थिति की अनेक स्थलों पर समीक्षा की गई है जो इस बात की सूचक है कि लेखकों ने इसमें नवीनतम सूचनाएँ उपलब्ध कराने की भरसक चेष्टा की है ।

पुस्तक में कुछ शब्द [Financing के लिए वित्तयन-पृष्ठ 244-246, Mobilization के लिए एकत्रण-पृष्ठ 229, NABARD के लिए कृषि और राष्ट्रीय विकास का ग्रामीण बैंक- पृष्ठ 356 से 358 तथा अन्य अनेक स्थलों पर, Cash Reserve Ratio के लिए नकद कोष अनुपात- पृष्ठ 668, Statutory Liquidity Ratio के लिए वैधानिक तरलता अनुपात- पृष्ठ 668, Foreign Exchange Reserves के लिए विदेशी विनिमय कोष- पृष्ठ 216, 226 तथा अन्य अनेक स्थल, Dissaving के लिए निर्बचत- पृष्ठ 412] तथा कुछ वाक्य (राजकोषीय घाटा इस प्रकार सरकारी राजस्व और अनुदान की राशि के ऊपर सरकारी व्यय का अतिरेक होता है- पृष्ठ 215) ऐसे भी मिले जो बैंकों और सरकारी विभागों में काम करने वाले तथा तकनीकी शब्दों की तलाश के अत्यंत अभ्यस्त हो चुके लोगों को खटक सकते हैं लेकिन ऐसी समस्याएँ पुस्तक में इतनी कम हैं कि वे पाठक के लिए कोई विशेष कठिनाई उपस्थित नहीं करतीं तथा थोड़ा ध्यान देने पर कही गई बात का अभीष्ट अर्थ पाठक को समझ में आ जाता है । वस्तुतः आर्थिक व तकनीकी विषयों पर हिन्दी में सहज, सरल और प्रवाहमयी भाषा में अर्थ की सद्यःसंप्रेषणीयता में सक्षम लेखन की आज नितान्त आवश्यकता है । बाजार में ऐसे विषयों पर जो पुस्तकें उपलब्ध हैं, उनकी भाषा पर अनुवाद की छाप इतनी गहरी है कि वस्तुतः कई जगहों पर वाक्य अपना उद्दिष्ट अर्थ संप्रेषित ही नहीं कर पाते या उनका अर्थ समझने के लिए पाठक को बड़ी माथापच्ची करनी पड़ती है । ऐसी परिस्थिति आने पर पाठक यह सोचने को विवश हो जाता है कि ऐसी जद्दोजहद से तो किसी अन्य पुस्तक की तलाश करना ही बेहतर है । लेकिन इस दृष्टि से इस पुस्तक में प्रयुक्त भाषा सरल, सहज तथा अर्थ सम्प्रेषित करने में सक्षम है, यह बड़ी प्रसन्नता की बात है । कुल मिलाकर, इसे एक उत्कृष्ट पुस्तक की श्रेणी में रखा जा सकता है ।

यह पुस्तक भारतीय अर्थव्यवस्था पर बाजार में उपलब्ध पुस्तकों

में बहुत अच्छा स्थान रखती है । बैंको के अन्य कार्यालय इसकी एक-दो प्रतियाँ अपने पुस्तकालयों में अवश्य रखें । समीक्षाधीन पुस्तक इसके हिन्दी रूपांतर का चौदहवाँ संस्करण है । यह इसकी लोकप्रियता एवं माँग का प्रबल एवं पुष्ट प्रमाण भी है ।

डॉ. जयप्रकाश मिश्र
प्रबंधक (राजभाषा)
औद्योगिक और निर्यात ऋण विभाग
भारतीय रिज़र्व बैंक
मुंबई

पुस्तक का नाम	:	**विशेष एवं अधिमानित क्षेत्र वित्त**
लेखक का नाम	:	ईश्वर धींगड़ा
प्रकाशक	:	सुलतान चंद एंड संस
पुस्तक पृष्ठ	:	298
पुस्तक मूल्य	:	100/- रुपये

भारतीय बैंकर्स संस्थान की जूनियर एसोसिएट परीक्षा के लिए निर्धारित पाठ्यक्रम को ध्यान में रखते हुए विशेष रूप से हिन्दी में तैयार की गयी उक्त पुस्तक के चार खंड हैं : (1) प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र, (2) ग्रामीण वित्त, (3) कृषि वित्त तथा (4) निर्यात वित्त ।

पुस्तक को उपयोगी, सरल तथा आम पाठकों के लिए भी बोधगम्य बनाने की दृष्टि से सामग्री प्रस्तुत करने के लिए नवीनता का सहारा लिया गया है और इसके लिए प्रश्नोत्तर शैली अपनायी गयी है तथा पूरी पुस्तक में प्रयुक्त शब्दावली की संक्षिप्त परिभाषाएं भी दी गयी हैं ताकि पाठक पुस्तक में जैसे-जैसे आगे बढ़ता जाये उसे भरपूर पठन सामग्री तो मिले ही, साथ ही साथ विषयगत संकल्पनाएं भी स्पष्ट होती चलें ।

एक और अच्छी बात इस पुस्तक के विषय में यह है कि इसमें स्थान-स्थान पर प्रयुक्त बैंकिंग शब्दों, संस्थाओं के नाम, विभिन्न योजनाओं के नाम तथा विकास कार्यक्रमों के नाम तथा विकास कार्यक्रमों के नामों का उल्लेख करते समय प्रचलित अंग्रेजी शब्दावली का भरपूर लाभ लिया गया है जिससे पुस्तक की उपादेयता बढ़ गयी है और पाठक जिन अंग्रेजी शब्दों से अब तक परिचित था, उनके हिन्दी पर्याय भी जान लेता है और उसके विषय में अधिक जानकारी भी प्राप्त कर लेता है ।

प्रश्नोत्तर शैली अपनाते हुए लेखक महोदय ने आवश्यकता के अनुसार तीन प्रकार के उत्तर देने का प्रयास किया है । तीन पंक्तियों में उत्तर वाले प्रश्न, संक्षिप्त टिप्पणी वाले प्रश्न और दीर्घ उत्तरों की अपेक्षा रखने वाले प्रश्न । इनके अलावा लेखक ने पाठकों की सहायता के लिए तथा आज कल के ट्रेंड के हिसाब से खाली स्थान भरो तथा सही गलत चुनने वाले विकल्प वाली शैली का भी समावेश किया है जिनके लिए कारण सहित उत्तर देने की सुविधा दी गयी है ।

पूरी पुस्तक को ध्यान से देख और पढ़ लेने के बाद मेरे मन में कुछ स्वाभाविक प्रश्न उठे हैं जो इस तरह से हैं :

बेशक लेखक ने विभिन्न प्रामाणिक स्रोतों से आवश्यक जानकारी जुटाने की कोशिश की है और काफी हद तक वे इस में सफल भी रहे हैं और बोधगम्य भाषा में सारी सामग्री को सिलसिलेवार प्रस्तुत करने में सफल रहे है । पूरी पुस्तक अत्यंत महत्त्वपूर्ण तथ्यों और जानकारी से लैस है और लेखक महोदय को बधाई देने को जी चाहता है कि उन्होंने इतने विषद अध्ययन के बाद यह पुस्तक तैयार की है और भाषा अत्यंत प्रवाहमयी और सहज, सरल बन पड़ी है, लेकिन साथ ही एक सवाल उठता है कि हमें यह नहीं भूलना चाहिये कि किसी भी विषय पर लिखे निबंधों में और पाठ्य पुस्तकों की सार गर्भित टिप्पणियों में मूल अंतर होता है । पूरी पुस्तक निबंधों

की सी भाषा में लिखी प्रतीत होती है ।

दूसरा महत्त्वपूर्ण मुद्दा है जिस विषय पर आप पुस्तक लिख रहे हैं, उसकी पारिभाषिक शब्दावली की न केवल बारीक जानकारी होनी चाहिये बल्कि किसी खास मकसद से प्रयोग में लाये जाने वाले शब्दों के बीच के अंतर की भी जानकारी होनी चाहिये नहीं तो आप न तो विषय के साथ न्याय कर पायेंगे और न ही पाठकों के साथ और पाठक जब इस तरह की पुस्तक की सहायता लेकर परीक्षा देने जायेगा तो पुस्तक उसकी मदद करने के बजाए उसका अहित ही करेगी ।

एक शब्द है credit यदि किसी भी मानक शब्दकोष में देखें तो हमें इसके बीसियों अर्थ मिल जायेंगे और बैंकिंग शब्दावली में देखें तो इसके अर्थ मिलते हैंः साख, प्रत्यय, ऋण, जमा, जमा करना, श्रेय आदि । बेशक ये सभी पर्याय credit के ही हैं लेकिन हर शब्द का अर्थ दूसरे अर्थ से बिलकुल अलग है और एक अर्थ के स्थान पर दूसरा अर्थ प्रयोग करने से न केवल अनर्थ होगा बल्कि पूरा वाक्य ही अटपटा बन जायेगा । लेखक महोदय ने पूरी किताब में credit शब्द के लिए साख वाला अर्थ लिया है तथा - साख योजना, साख सुविधाएं, आदि जबकि बैंकिंग में साख creditworthyness के अर्थ में लिया जाता है ।

बैंकिंग विषय पर इतनी पुस्तकें लिखने वाले लेखक से इतनी उम्मीद तो की ही जानी चाहिये कि उसे साख और ऋण में फर्क मालूम हो। इसी तरह से selection के लिए चयन के बजाए चुनाव (चुनाव election होता है), features के लिए लक्षण के बजाए विशेषताएं (ग्रामीण भारत में गरीबी एवं इसकी विशेषताएं, पृष्ठ 27) प्रयोग में लाये गये हैं । इसी तरह से जनजातियों की बात करते समय लेखक महोदय ने पृष्ठ 55 पर लिखा है (.... इनका एक समान धर्म है जिसे पशुत्व animis कहते हैं । ये सभी भूत प्रेतों तथा प्रेतात्माओं में विश्वास रखते हैं ।) यह बड़ी भूल है । पहली बात कि शब्द animus या animist है न कि animis और इसका हिन्दी अनुवाद पशुत्व नहीं बल्कि सर्वचेतनावाद है ।

पूरी पुस्तक में इस तरह की तथ्यात्मक भूलें हैं । मुद्रण की ढेरों गलतियां तो हैं ही । यदि इन सब पर ध्यान न दिया जाये तो पुस्तक उपयोगी कही जा सकती है और पाठक की जानकारी में काफी इजाफा करती है।

सूरज प्रकाश
प्रबंधक (राजभाषा)
प्रेस संपर्क प्रभाग
भारतीय रिज़र्व बैंक
मुंबई

बैंकर प्रशिक्षण महाविद्यालय का हिन्दी प्रकाशन - ''जोख़िम प्रबंध''

बैंकर प्रशिक्षण महाविद्यालय हिन्दी में 'जोख़िम प्रबंध' (Risk Management) पर एक पुस्तक प्रकाशित करने जा रहा है जिसकी अनुमानित लागत 100/120 रुपये होगी । इस पुस्तक में जोख़िम और उससे जुड़े विभिन्न पहलुओं पर विस्तृत जानकारी समेकित रुप में उपलब्ध होगी जो न केवल हिन्दी माध्यम से परीक्षाएं देनेवाले परीक्षार्थियों के लिए बल्कि एक सन्दर्भ साहित्य के रुप में पुस्तकालय के लिए भी बहुत उपयोगी सिद्ध हो सकती है ।

इस संबंध में पाठकों से अनुरोध है कि यदि वे इस पुस्तक की खरीद में रुचि रखते हों तो शीघ्रातिशीघ्र हमें लिखित रूप में अपनी मांग से अवगत कराएं ताकि हम निर्धारित संख्या में इस पुस्तक का मुद्रण करा सकें ।

कार्यकारी संपादक

लेखकों से

'बैंकिंग चिंतन-अनुचिंतन' बैंकिंग विषयों को समर्पित एकमात्र पत्रिका है जिसकी प्रतियाँ बैंकों की शाखाओं, कार्यालयों और प्रशिक्षण संस्थाओं के अलावा भारतीय रिज़र्व बैंक, उसके सभी क्षेत्रीय कार्यालयों, विभागों आदि को उपलब्ध करायी जाती हैं। इस प्रकार यह पत्रिका समूचे बैंकिंग क्षेत्र में पाठकों के एक बहुत बड़े वर्ग द्वारा पढ़ी जाती है।

इस पत्रिका का उद्देश्य बैंकिंग और उससे संबंधित विषयों पर हिन्दी में मौलिक सामग्री उपलब्ध कराना है। बैंकिंग विषयों पर हिन्दी में मूल रूप से लिखनेवाले सभी लेखकों से सहयोग मिले बिना इस उद्देश्य की पूर्ति कैसे होगी ? हमें इसमें आपका सक्रिय सहयोग चाहिए। बैंकिंग विषयों पर हिन्दी में मूल रूप से लिखे स्तरीय लेखों की हमें प्रतीक्षा रहती है। साथ ही, अर्थशास्त्र, वित्त, मुद्रा बाज़ार, पूंजी बाज़ार, वाणिज्य, विधि, मानव संसाधन विकास, कार्यपालक स्वास्थ्य, मनोविज्ञान, परा बैंकिंग, कम्प्यूटर, सूचना प्रौद्योगिकी आदि क्षेत्रों से जुड़े विशेषज्ञ इन विषयों पर व्यावहारिक या शोधपूर्ण मौलिक लेख भी हमें प्रकाशनार्थ भेज सकते हैं। प्रकाशित लेखों और पुस्तक समीक्षाओं पर सांकेतिक **मानदेय देने** की व्यवस्था है। ***कृपया प्रकाशनार्थ सामग्री भेजते समय यह देख लें कि :-***

- सामग्री ***बैंकिंग और उससे संबंधित विषयों*** पर ही है।
- उसमें दी गयी जानकारी ***उपयोगी*** और ***अद्यतन*** है एवं ***अधिकतम 8 टंकित पृष्ठों*** में है।
- वह कागज़ के ***एक ओर*** स्पष्ट अक्षरों में ***लिखित*** अथवा ***टंकित*** है।
- यथासंभव ***सरल और प्रचलित हिंदी शब्दावली*** का प्रयोग किया गया है और अप्रचलित एवं तकनीकी शब्दों के अर्थ कोष्ठक में अंग्रेजी में दिये गये हैं।
- यह प्रमाणित करें कि लेख ***मौलिक है,*** प्रकाशन के लिए ***अन्यत्र नहीं भेजा गया है*** और 'बैंकिंग चिंतन-अनुचिंतन' में प्रकाशनार्थ प्रेषित है।
- लेख में शामिल ***आंकड़ों, तथ्यों आदि के संबंध में स्रोत*** का स्पष्ट उल्लेख करें।
- प्रकाशन के संबंध में यह सुनिश्चित करें कि ***जब तक लेख संबंधी अस्वीकृति की सूचना प्राप्त नहीं होती,*** संबंधित लेख किसी ***अन्य पत्र-पत्रिका में प्रकाशनार्थ न भेजा जाए।***

पाठकों से

इस पत्रिका को आप पाठकों का निरंतर स्नेह मिलता रहा है। जनवरी 2001 से इस पत्रिका को इंटरनेट पर डाल दिए जाने के बाद से हमें अपने पाठकों से इस आशय की शिकायतें मिलने लगीं कि पत्रिका का मुद्रण क्यों बंद कर दिया गया है। इस संबंध में हम अपने पाठकों को बताना चाहेंगें कि यह पत्रिका **मुद्रित रूप में अब भी उपलब्ध है और इसका प्रकाशन बंद नहीं किया गया है।** बल्कि अब इसे आप निःशुल्क प्राप्त कर सकते हैं। इसके लिए आपको लिखित रुप में " कार्यकारी संपादक, बैंकिंग चिंतन अनुचिंतन " से अनुरोध करना होगा। आपका पत्र मिलते ही आपका नाम डाक सूची में शामिल कर लिया जाएगा और तदनंतर आपको पत्रिका निरंतर मिलती रहेगी। आपसे अनुरोध है कि अपने सहयोगियों को भी यह जानकारी प्रदान करें तथा अपनी मांग से हमें तत्काल अवगत कराएं ताकि हम तदनुसार प्रतियों का मुद्रण कर सकें।